इकाई—18

उच्चारण स्थान, स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य

इस इकाई के माध्यम से आपको भाषा के सामान्य स्वरूप, तथा स्वर एवं व्यंजन का लक्षण व स्वरूप का ज्ञान होगा। इसके साथ ही स्वरों तथा व्यंजनों की संख्या, मनुष्य के शरीर तंत्र में उनके उच्चारित होने/बोले जाने के स्थान तथा उनकी पारिभाषिक संज्ञाएँ भो जान सकेंगे जिनके विषय में सामान्यतः चर्चा नहीं की जाती।

18.1 प्रस्तावना

भाषा विज्ञान भाषा का विज्ञान है। मनुष्य अपनी भाषा के कारण ही समस्त प्राणि जगत् में विलक्षण माना जाता है। भाषा का आधार स्वर एवं व्यंजन है। इन्हों के संयोग से शब्द बनते हैं। शब्द संज्ञा, क्रिया, विशेषण आदि के बोधक होते हैं। इन्हीं शब्दों के परस्पर संयोग से

वाक्य का निर्माण होता है। यह प्रक्रिया क्या है, इसके कारण क्या है आदि प्रश्नों का उत्तर इस इकाई में दिया जा रहा है।

18.2 भाषा का सामान्य स्वरूप लक्षण

अपने भावों और विचारों को व्यक्त करने की मानवीय चेष्टा को भाषा कहते हैं। भाषा शब्द संस्कृत की 'भाष्' धातु से बना है जो कहने या बोलने का अर्थ ज्ञापित करती है। स्पष्ट है कि भाषा वह है जो बोली जाती है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि भाषा मानवीय कार्यों या विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम है। थोड़ी पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग करें तो कह सकते हैं कि भाषा मानवीय शरीर में विद्यमान उच्चारण अवयवों से निसृत ध्वनियों की वह व्यवस्था है जिसके माध्यम से मनुष्य का एक–दूसरे से संपर्क होता है, बना रहता है। भाषा में वाक्यों का प्रयोग होता है। प्रस्तावना में कहा गया था कि विभिन्न शब्दों का परस्पर संयोग वाक्य का निर्माण करता है किन्तु इन सभो शब्दों का एक–दूसरे से सार्थक सम्बन्ध होना आवश्यक है। ऐसा न होने ''गाय–घोड़ा–पुरूष–हाथी'' आदि शब्द–समूह भो वाक्य बन जायेगा। यही कारण है कि संस्कृत के विद्वान वाक्य का लक्षण देते हुए कहते हैं–

''वाक्यं स्यात् योग्यताकांक्षासक्ति युक्तः पदोच्चयः।''

अर्थात् योग्यता, आकांक्षा तथा आसक्ति से युक्त पदों या शब्दों का समूह ही वाक्य होता है। यहाँ इन तीनों का पारिभाषिक शब्दों का अर्थ जान लेना आवश्यक है अतः नीचे इनका विवेचन किया जा रहा है।

18.2.1 योग्यता

''पदार्थानां परस्परसंबन्धे बाधाभावः'' अर्थात् पदो ंके पारस्परिक अर्थ सम्बन्ध में किसी बाधा या रूकावट का न होना। उदाहरण के लिए यदि हम कहें कि ''वह आग से पेड़ को सींचता है'' तो यह वाक्य नहीं होगा क्योंकि आग और सींचने का कार्य परस्पर असंगत है। अतः अर्थ–सम्बन्ध में बाधा उत्पन्न होती है।

18.2.2 आकांक्षा

''प्रतीतिपर्यवसायविरहः आकांक्षा।'' प्रतीति अर्थात् आगे आने वाले शब्द को जानने की इच्छा। यह श्रोता या सुनने वाले की जिज्ञासा का द्योतन करती है। श्रोता यह जानना चाहता है कि एक शब्द के बाद अगला उच्चारित शब्द क्या होगा। उदाहरण के लिए यदि हम कहें कि 'राम' 'गांव' तो श्रोता के मन में अगला शब्द या पद जानने की इच्छा तब तक बनी रहती है जब तक वह इसे सुन नहीं लेता।

18.2.3 आसक्ति–

''पदानां अविलम्बोच्चारणम् आसत्तिः।'' अर्थात् पदो ंके मध्य बिना किसी विराम के उच्चारण का होना आसत्ति है। कथन का तात्पर्य है कि प्रातः काल 'राम' शब्द बोलकर दोपहर में 'गांव' तथा रात में 'जाता है' का प्रयोग करने पर वाक्य नहीं बनता। वाक्य संज्ञा तभो होती है जब एक शब्द के बाद दूसरा– तीसरा आदि अविलंब/एकसाथ बोले जाते हैं।

18.3 स्वर विवेचन

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि अनेक शब्दों के सम्मिलन से भाषागत वाक्यों का निर्माण होता है। शब्द/पद स्वरों तथा व्यंजनों के संयोग से बनते हैं। संस्कृत भाषा में अ, इ, उ, ऋ, ल, ए, ओ, ऐ औ आदि नौ स्वर हैं। अ, इ, उ, ऋ, लृ के ह्रस्व दीर्घ भद भो होते हैं। ए, ऐ, ओ तथा औ आदि संयुक्त स्वर हैं क्योंकि इनका निर्माण दो स्वरों के मिलने से होता है। अ तथा इ के मिलने से ए, अ तथा उ के मिलने से ओ, अ एवं ए के संयोग से ऐ तथा अ और ओ की संधि से औ का निर्माण होता है। वैदिक संस्कृत में स्वरों के उदात्त,

अनुदात्त तथा स्वरित नामक तीन भद ध्वनि मान (जिसे अंग्रेजी में पिच कहते हैं) के अनुसार किए गए थे।

ऊँची ध्वनि में उदात्त, नीची ध्वनि में अनुदात्त तथा मध्यम ध्वनि में स्वरित का उच्चारण होता था। इसी प्रकार स्वरों के उच्चारण में लगने वाली मात्रा/समय के आधार पर ह्रस्व, दीर्घ एवं प्लुत में भो विभाजित किया गया था। उच्चारण में एक मात्रा का समय लगने पर ह्रस्व, दो मात्रा का समय लगने पर दीर्घ तथा तीन मात्रा का समय लगने पर प्लुत कहा जाता था। स्वरों का एक अन्य विभाजन उच्चारण काल में होने वाले बाह्य एवं आभ्यन्तर प्रयत्न अर्थात् मुख के खुलने की स्थिति के आधार पर भो किया जाता है। इस विभाजन के चार प्रकार हैं–

(क) **संवृत**– मुख द्वार के संकुचन काल में उच्चारित होने वाले संवृत कहे जाते हैं। जैसे अ, इ, ई तथा ऊ।

(ख) **अर्ध संवृत**– अर्ध संकुचित मुख द्वार से निसृत स्वर अर्धसंवृत कहलाते हैं जैसे ए तथा ओ।

(ग) **अर्ध विवृत**– आधे खुले हुए मुख द्वार से अर्ध विवृत स्वरों का जन्म होता है जैसे ऐ एवं औ।

(घ) **विवृत**– पूरी तरह खुले हुए मुख द्वार से निकले हुए स्वर विवृत होते ह जैसे आ।

18.4 स्वर तथा व्यंजन का लक्षण

स्वर तथा व्यंजन मूलतः मुख से निकलने वाली ध्वनियाँ ही हैं। ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी में महाभाष्यकार पतंजलि ने कहा था– ''स्वयं राजन्ते इति स्वराः। अन्वग् भवति व्यंजनमिति'' अर्थात् स्वर स्वतन्त्र होते हैं तथा व्यंजन उन पर आधारित है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि स्वर बिना किसी सहायता के स्वयं उच्चारित होने वाली ध्वनियाँ हैं लेकिन व्यंजन वे ध्वनियाँ हैं जो स्वरों की सहायता के बिना उच्चारित नहीं होतीं। यही कारण है कि व्यंजनों को हलन्त लगाकर अर्थात् आधा लिखा जाता है जैसे क, च्, ट्, त् प् आदि। स्वरों के मिलने पर इनका स्वरूप क, च, ट, त, प हो जाता है।

18.5 व्यंजन संख्या

संस्कृत भाषा में व्यंजनों की संख्या तैंतीस है। कवर्ग से पवर्ग तक पच्चीस तथा य्, र्, ल्, व्, श्, ष्, स्, ह् को मिला कर तैंतीस व्यंजन होते हैं। हिन्दी की वर्णमाला में अलग से प्राप्त होने वाले क्ष्, त्र्, ज्ञ् संस्कृत में स्वतन्त्र व्यंजन नहीं माने जाते। ये मूलतः दो व्यंजनों के मेल से बने व्यंजन हैं। क् तथा ष् से क्ष्, त् एवं र् से त्र तथा ज् और ञ् से ज्ञ् का निर्माण होता है। यही कारण है कि शब्दकोषों में क्ष्, त्र्, ज्ञ् से बने हुए शब्द श्, ष्, स्, ह् के बाद प्राप्त नहीं होते अपितु क्, त् तथा ज् के मध्य ही मिलते हैं।

18.6 ध्वनि विवेचन

स्वर तथा व्यंजन ध्वनियाँ ही हैं यह अब तक किए गए विवेचन से स्पष्ट हो चुका है। इससे यह भो तय हो जाता है कि ध्वनि ही भाषा की उत्पत्ति का कारण है। सकेतों या प्रतीकों के माध्यम से उत्पन्न मुख से उत्पन्न ध्वनि ही भाषा का रूप ग्रहण करती है। भाषा विज्ञान, मानव मुख से निकलने वाली सार्थक ध्वनियों का विवेचन करता है अतः इसे हिन्दी में ध्वनिविज्ञान या स्वरविज्ञान तथा अंग्रेजी में फोनेटिक्स कहते हैं। प्रत्येक ध्वनि के अपने उच्चारण अंग, स्थान तथा प्रयत्न होते हैं। मानव शरीर की ध्वनियों का उच्चारण वाग्यंत्र से करता है। इन अंगों को उच्चारण अवयव भो कहते हैं।

18.7 ध्वनि अवयव

मानव शरीर में ध्वनि उच्चारण हेतु जिन अवयवों की भ्मिका होती है चल तथा अचल दो भागों में विभक्त किया जाता है। जबड़े सहित नीचे का होठ, जीभ तथा उसके विभिन्न भाग चल अवयव हैं क्योंकि इन्हें ऊपर या नीचे गति देकर ध्वनियों का उच्चारण किया जाता है। ऊपर के दाँत, होठ तथा तालू के विभिन्न भाग अचल अवयव कहे जाते हैं क्योंकि उच्चारण काल में यह स्थिर रहते हैं। मुख में पीछे की ओर बीच में लंबायमान स्थिति में विद्यमान कौवा चल होने पर भो मुख के ऊपरी भाग से जुड़ा होने के कारण अचल अवयव ही माना जाता है।

18.7.1 श्वास–भोजन–नलिका तथा अभिकाकल

नासिका के द्वारा श्वास प्रक्रिया संचालित होती है। सांस लेने की नली फेफड़ो से जुड़ी होती है। इस श्वास नलिका के पीछे भोजन नलिका होती है। श्वास तथा भोजन नलिका के मध्य दोनों को अलग करने वाली एक दीवार होती है। भोजन नलिका के मुख से संलग्न श्वास नलिका की ओर झुकी हुई एक छोटी जीभ सरीखी आकृति का अभिकाकल होता है। इसका काम भोजन करते समय श्वासनलिका को बंद कर भोजन या पानी को अंदर जाने से रोकना है। इस प्रकार अभिकाकल रक्षक का काम करता है। संभव है कि सांस रोककर उच्चारित होने वाली अनुनासिक ध्वनियों के उच्चारण में भो इसकी कुछ भ्मिका रहती हो।

18.7.2 स्वरयंत्र, यंत्रमुख तथा स्वर रज्जु

श्वास नली के ऊपरी भाग में अभिकाकल से थोड़ा नीचे की ओर स्वरयंत्र होता है। मानव के गले में जो उभार दिखाई देता है जिसे सामान्य भाषा में टेंटुआ कहते हैं वह यही स्वरयंत्र है। इस यंत्र में अत्यन्त पतली झिल्ली के दो लचीले परदे होते हैं। जिन्हें स्वर रज्जु कहते हैं इन परदों के मध्य के खुले भाग को यंत्रमुख या काकल कहा जाता है। बोलते समय वायु इसी स्थान से आवागमन करती है। यह स्वर–रज्जु कभो एकदूसरे के निकट आकर और कभो दूर जाकर अनेक प्रकार की ध्वनियों को उत्पन्न करती है।

18.7.3 मुख–नासिका–विवर एवं कौवा

स्वरयंत्र के ऊपर का ढक्कन या आवरण अभिकाकल होता है यह पहले कहा जा चुका है। इसके ऊपर के खाली स्थान में श्वास नलिका, भोजन नलिका, मुख तथा नासिका विवरण चारों ओर स्थित होते हैं। ऐसा भो कहा जा सकता है कि यह एक चतुष्पथ या चौराहा है जिसके बीच में अभिकाकल होता है। नासिका तथा मुख विवर के मध्य एक छोटी जीभ की भाँति कौवा होता है। अभिकाकल की भाँति इसका कार्य भो कोमल तालु के साथ मार्ग रोकना ही होता है।

18.7.4 तालु, जिह्वा, दन्त तथा ओष्ठ

मुख में ऊपर की ओर तालु की स्थिति है। इसके चार भाग होते है। कोमल तालु, मूर्द्धा, कठोर तालु और वर्त्स। इसे निम्न प्रकार समझा जा सकता है।

मुख के नीचे की ओर उच्चारण अवयवों में सर्वप्रमुख जिह्वा होती है। साधारण अवस्था में यह नीचे की ओर ढीली पड़ी रहती है। बोलने के समय मानव जीभ के संचालन, वायु–अवरोध आदि के द्वारा विभिन्न ध्वनियों को उत्पन्न करता है। जीभ के निम्न पाँच भाग हैं।

मुख में जिह्वा के बाद प्रधानता दाँतों की है। बोलते समय ध्वनि–निर्माण में ऊपर दाँत अधिक काम आते हैं तथा नीचे के होंठ अथवा जीभ से मिलकर काम करते हैं। ध्वनि निर्माण से संबंधित अंतिम अंग होठ हैं जो सम्मिलन अथवा दाँतों की सहायता से ध्वनि उत्पन्न करते हैं। मानव शरीर में ध्वनि निर्माण प्रक्रिया से सम्बन्धित ज्ञात अंगों की संख्या निम्न क्रमानुसार हैं– (1) कंठ मार्ग, (2) भोजन नलिका, (3) स्वरयंत्र, (4) काकल, (5) स्वररज्जु, (6) अभिकाकल, (7) नासिका–विवर, (8) मुख–विवर, (9) कौवा, (10) कंठ, (11)

कोमल तालु, (12) मूर्द्धा, (13) कठोर तालु, (14) वर्त्स, (15) दाँत, (16) होंठ, (17) जिह्वा मध्य, (18) जिह्वा नोक, (19) जिह्वाग्र, (20) जिह्वा पश्च, (21) जिह्वा मल (22) जिह्वा। यदि दाँतों का परिगणन अलग से किया जाए, जैसा कुछ लोग ऊपर–नीच के आधार पर करते हैं, तो यह संख्या तेईस हो जाती है किन्तु उचित है कि इनका परिगणन एक साथ किया जाए। भाषा वैज्ञानिक दाँतों को एक अंग मानने के अधिक पक्ष में है। वैसे भो बोलते समय ऊपर के दाँतों का ही प्रयोग प्रमुखतः होता है।

18.8 भाषाविज्ञान के अनुसार व्यंजन भद

भाषा वैज्ञानिकों ने उच्चारण प्रक्रिया के अनुसार व्यंजनों के निम्न आठ भद प्रमुख रूप से स्वीकार किए हैं–

(1) **स्पर्श**–उच्चारण काल में मुख खोलने पर जब वायु उच्चारण स्थानों को केवल स्पर्श ही करती है उन ध्वनियों को स्पर्श कहा जाता है। क, ख, ग आदि ऐसी ही ध्वनियाँ हैं।

(2) **संघर्षी**– मुख के अत्यधिक संकुचित हो जाने के कारण जब बोलते समय हवा घर्षण करती हुई रगड़ती हुई निकलती है तो ऐसी ध्वनियों को संघर्षी कहा जाता है। फ्, ब्, स् आदि इनके उदाहरण है।

(3) **अनुनासिक**– जिन ध्वनियों का उच्चारण करने पर वायु मुख तथा नासिका के साथ–साथ निकलती हैं उन ध्वनियों को अनुनासिक कहते हैं। ञ्, म, ङ्, ण, न् आदि अनुनासिक हैं।

(4) **स्पर्श संघर्षी**– इन ध्वनियों के उच्चारण का प्रथम चरण स्पर्श ध्वनियों की भाँति होता है अर्थात् इस चरण में वायु केवल स्पर्श करतो है। दूसरे चरण में वायु मुख संकोच के कारण घर्षण करती है। च्, छ्, ज्, झ् स्पर्श संघर्षी हैं।

(5) **पार्श्विक**– इन ध्वनियों के उच्चारण काल में मुख्य के मध्य भाग के अवयव वायु को ऐसे रोकते हैं कि उसे मुख के पार्श्व या बगल से ही निकलना पड़ता है। ल् पार्श्विक का उदाहरण है।

(6) **उत्क्षिप्त**–इन ध्वनियों को उच्चारण के समय जीभ, ऊपर की ओर उठकर तालु का स्पर्श कर झटके से नीचे आती है। ड्, ढ्, इसी प्रकार की ध्वनियाँ हैं।

(7) **लुंठित अथवा कंपनजात**– इन ध्वनियों के उच्चारण में किसी अवयव की नोक में वायु के प्रवाह से कंपन होता है। र् का उच्चारण इसी श्रेणी का है।

(8) **सप्रवाह**– इन ध्वनियों को बोलते समय वायु का प्रवाह तो होता है किन्तु सघर्ष नहीं होता। ये ध्वनियाँ स्वरों व व्यंजनों के मध्य स्थित हैं अतः इन्हें अर्ध स्वर भो कहा जाता है किन्तु अपनी प्रकृति की दृष्टि से यह व्यंजनों के अधिक निकट है अतः इन्हें अर्धव्यंजन कहा जाना अधिक उपयुक्त है। य् तथा व् ऐसी ही ध्वनियाँ हैं।

18.9 संस्कृत व्याकरण तथा स्वर–व्यंजन वर्गीकरण

संस्कृत भाषा के वैयाकरणों ने ध्वनि, उच्चारण आदि पर गहन विचार किया है। पाणिनि ने सभो स्वर–व्यंजन ध्वनियों को चौदह सूत्रों में आबद्ध कर दिया है। इन्हें माहेश्वर सूत्र कहते हैं। क्रमानुसार माहेश्वर सूत्र निम्नलिखित है– (1) अइउण् (2) ऋलृक्, (3) एओङ्, (4) ऐऔच् (इन चार सूत्रों में संपूर्ण स्वर समुदाय आ जाता है।) इसके बाद व्यंजनों की गणना की गई है– (5) हयवरट्, (6) लण्, (7) ञमङणनम्, (8) झभञ्, (9) घढधष्, (10) जबगडदश्, (11) खफछठथचटतव्, (12) कपय्, (13) शषसर्, (14) हल्।

उपर्युक्त सूत्रों के आधार पर ही वैयाकरणों ने ध्वनियों का वर्गीकरण किया है। इस वर्गीकरण के दो मूल आधार हैं– स्थान तथा प्रयत्न। प्रयत्न को आभ्यन्तर (आंतरिक) और बाह्य दो प्रकार का माना गया है।

18.10 स्थान के आधार पर वर्गीकरण

उच्चारण स्थान के आधार पर ध्वनियों का संस्कृत वैयाकरणों ने निम्न प्रकार से वर्गीकरण किया है–

(1) **कण्ठ**– जिन ध्वनियों को कंठ से बोला जाता है वे कण्ठ्य कहीं गई हैं। अ, कवर्ग, ह एवं विसर्ग कण्ठ्य ध्वनियाँ हैं– ''अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः।''

(2) **तालु**– उच्चारण काल में तालु का स्पर्श होने से तालव्य ध्वनियों का जन्म होता है। ''इचुयशानां तालुः'' अर्थात् ई, चवर्ग, य तथा श तालु से बोले जाते हैं।

(3) **मूर्द्धा**– जिन ध्वनियों के उच्चारण काल में जिह्वा मूर्द्धा का स्पर्श करती है वे मूर्धन्य ध्वनियाँ हैं। ''ऋटुरषाणां मूर्द्धा'' अर्थात् ऋ, टवर्ग, र तथा ष मूर्धन्य कही जाती हैं।

(4) **दाँत**– दाँतों के स्पर्श से उच्चारित ध्वनियाँ दन्त्य है। ''लृतुलसानां दन्तः'' अर्थात् लृ, तवर्ग, ल और स का उच्चारण जिह्वा के द्वारा दाँतों के स्पर्श से होता है।

(5) **होठ/ओष्ठ**– जिन ध्वनियों के उच्चारण में होठों का स्पर्श प्रधान होता वे ओष्ठ्य कही जाती हैं। ''उपूपध्मानीयानामोष्ठौ'' अर्थात् उ, पवर्ग एवं उपध्मानीय (प, फ) का उच्चारण स्थान ओष्ठ है।

(6) **नासिका**– नाक से वायु संचरण द्वारा निकाली गई ध्वनिया अथवा वे ध्वनियाँ जो नाक से उच्चरित होती है इस श्रेणी में रखी जाती है। ''ञमङणननां नासिका'' अर्थात् ञ, म, ङ, ण न का उच्चारण नाक से किया जाता है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि यद्यपि इन ध्वनियों के उच्चारण में, हर ध्वनि की भाँति, मुख का प्रयोग होता है तथापि इन्हें नासिका से ही उच्चारित माना गया है। इसका कारण यह है कि मुख तथा नासिका से उच्चारण होने वाले वर्णों को अनुनासिक कहा जाता है जैसे कँ, खँ आदि अनुनासिक वर्ण हैं। ऊपर सूत्र में गिनाए गए वर्ण अनुस्वार रूप में भो प्रयुक्त होते हैं यदि इन्हें मुख तथा नासिका से उच्चारित कह दिया जाता तो अनुस्वार तथा अनुनासिक का भद ही समाप्त हो जाता।

(7) **कण्ठ–तालु**– जिन ध्वनियों का उच्चारण कण्ठ तथा तालु दोनों के अनुसार किया जाता है ऐसी ए, ऐ की ध्वनियाँ ''एदैतोः कण्ठतालु'' सूत्र के अनुसार कण्ठ्य भो हैं और तालव्य भो।

(8) **कण्ठ–ओष्ठ**– कण्ठ तथा ओष्ठ के माध्यम से उच्चारित ओ, और औ ध्वनियाँ कण्ठ्य तथा ओष्ठ्य हैं– ''ओदौतोः कण्ठोष्ठम्।''

(9) **जिह्वामूलीय**– जीभ के मूल अर्थात् जड़ या इसके आरंभ स्थान से उच्चारित ध्वनियाँ जिह्वामूलीय कही जाती हैं। ''जिह्वामूलीयस्य जिह्वामूलम्'' के अनुसार क, ख आदि ध्वनियाँ जिह्वामूलीय हैं।

18.11 प्रयत्न के आधार पर वर्गीकरण

ध्वनि के उच्चारण हेतु मुख से कण्ठ तक वायु के अवरोध आदि के जो प्रयास मनुष्य करता है उसे प्रयत्न कहते हैं। ध्वनि के उच्चारण के पूर्व मुख के अन्दर होने वाले यत्न को आभ्यन्तर प्रयत्न कहते हैं। मुख स वर्ण के बाहर आते या निकलते समय जो यत्न होता है, उसे बाह्य प्रयत्न कहते हैं। आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट, विवृत, ईषद्विवृत तथा संवृत पाँच प्रकार के होते हैं। बाह्य प्रयत्न के ग्यारह भद होते हैं। इनके नाम हैं विवार, संवार, श्वास, नाद, घोष, अघोष, अल्पपाण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित। वर्गीकरण निम्न चार्ट/ चित्र/सारणी के आधार पर आसानी से समझा जा सकता है।

आभ्यन्तरयत्न–बोधक सारणी

बाह्ययत्न–बोधक सारणी

18.12 पारिभाशिक शब्दावली

1. **स्वर** –संस्कृत भाषा में अ, इ, उ, ऋ, लृ, ए, ओ, ऐ औ आदि नौ स्वर ह। अ, इ, उ, ऋ, लृ के ह्रस्व दीर्घ भद भो होते हैं।
2. **व्यग्वन** – ''स्वयं राजन्ते इति स्वराः। अन्वग् भवति व्यंजनमिति'' अर्थात् स्वर स्वतन्त्र होते हैं तथा व्यंजन उन पर आधारित है।
   स्वर तथा व्यंजन ध्वनियाँ ही हैं संकेतों या प्रतीकों के माध्यम से उत्पन्न मुख से उत्पन्न ध्वनि ही भाषा का रूप ग्रहण करती है।
3. **ध्वनि**– ध्वनि के उच्चारण हेतु मुख से कण्ठ तक वायु के अवरोध आदि के जो प्रयास मनुष्य करता है उसे प्रयत्न कहते हैं।
4. **आकांक्षा** – ''प्रतीतिपर्यवसायविरहः आकांक्षा।'' प्रतीति अर्थात् आगे आने वाले शब्द को जानने की इच्छा।
5. **योग्यता** –''पदाथानां परस्परसंबन्धे बाधाभावः'' अर्थात् पदो ंके पारस्परिक अर्थ सम्बन्ध में किसी बाधा या रूकावट का न होना।
6. **सन्निधि** – ''पदानां अविलम्बोच्चारणम् आसत्तिः।'' अर्थात् पदो ंके मध्य बिना किसी विराम के उच्चारण का होना आसत्ति है।

18.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. भाषा शब्द संस्कृत की किस धातु से बना है तथा उसका क्या अर्थ है?
2. वाक्य किसे कहते है?
3. योग्यता, आकांक्षा तथा आसत्ति क्या हैं?
4. संस्कृत भाषा में कितने स्वर हैं?
5. संस्कृत भाषा में कितने व्यंजन हैं?
6. क्ष, त्र, ज्ञ व्यंजन क्यों नहीं हैं?
7. स्वर तथा व्यंजन का लक्षण स्पष्ट करें?
8. ध्वनि अवयवों की संख्या बताइये?
9. भाषा विज्ञान के अनुसार व्यंजन भद बताइये?
10. संस्कृत व्याकरण में स्वर–व्यंजन वर्गीकरण पर प्रकाश डालें?
11. तालु तथा जिह्वा के भाग बताएँ?
12. माहेश्वर सूत्र क्या है तथा कितने हैं?

प्रश्नोत्तर

1. 17.2 देखिये
2. 17.2 का अंतिम भाग देखें
3. 17.2.1 से 17.2.3 देखें
4 17.3 देखें
5 17.5 देखें
6 17.5. देखे
7 17.4 देखें
8 17.7.4 का अन्त देखें
9. 17.8 देखें

10. 17.9 से 17.10 देखें

11. 17.7.4 देखें

12. 17.9 देखें।

18.14 सारांश

ऊपर किए गए विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि भाषा ही मनुष्य को अन्य प्राणिवर्ग से पृथक् करने वाला प्रमुख तत्त्व है। भाषा के आरंभ से मानव की जिज्ञासा भाषा तथा उसके घटकों के अध्ययन के प्रति रही है। स्वर, व्यंजन, पद, वाक्य आदि सभो अनादि काल से मानवीय जिज्ञासा तथा अनुसंधान का विषय रहे हैं। स्वर–व्यंजन कैसे तथा कहाँ से उच्चारित होते हैं तथा उनसे अन्ततः मानवीय भाषा कैसे जन्म लेती है यह विषय विवेचित होता रहा है तथा भविष्य में भो होता रहेगा। इस इकाई के अध्ययन से प्रस्तुत विषय के संदभ में आपकी जिज्ञासाओं का शमन होगा।

18.15 संदभ ग्रंथ सूचो

1. तुलनात्मक भाषा विज्ञान– डॉ. पाण्डुरंग दामोदर गुणे, मोतीलाल बनारसीदास, 1963.
2. संस्कृत भाषाविज्ञान– राजकिशोर सिंह, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा,1986.
3. Introduction to Sanskrit Philology – बटुकृष्णघोष, मुन्शीराम मनोहरलाल,नई दिल्ली,1943.
4. भाषाविज्ञान,भोलानाथ तिवारी,किताब महल,इलाहाबाद,1951.
5. भाषाविज्ञान एवं भाषा शास्त्र, डॉ. कपिल देव द्विवेदी,विश्वविद्यालय प्रकाशन,वाराणसी,2002.

इकाई—19

ध्वनि परिवर्तन एवं अर्थ परिवर्तन के कारण

इकाई की रूपरेखा

19.10 अर्थ का महत्त्व

19.11 अर्थ–विज्ञान का क्षेत्र

19.12 अथ–परिवर्तन के कारण

19.12.1 बल प्रयोग या बल का अपसरण

19.12.2 पीढ़ी परिवर्तन के कारण

19.12.3 प्रकरण विभिन्नता

19.12.4 वातावरण में परिवर्तन

19.12.4.1 भोगोलिक

19.12.4.2 सांस्कृतिक

19.12.4.3 सामाजिक

19.12.4.4. भोतिक

19.12.4.5 प्रथा सम्बन्धी परिवर्तन

19.12.5 नम्रता प्रदर्शन

19.12.6 अशोभन के लिए शोभन भाषा का प्रयोग

19.12.6.1 अशुभ या बुरा

19.12.6.2 कटुता या भयंकरता

19.12.6.3 अश्लीलता सूचक

19.12.6.4. अंधविश्वास

19.12.6.5 हीनता

19.12.7 व्यंग्य के कारण

19.12.8 सामान्य के लिए विशेष का प्रयोग

19.12.9 अज्ञान या पांडित्य प्रदर्शन

19.12.10 शब्दार्थ की अन्तर्निहित अनिश्चितता

19.12.11 साहचर्य के कारण

19.12.12 नामकरण

19.12.13 धारणा–भद

19.12.14 शब्दार्थ के एकतत्त्व की प्रधानता

19.12.15 एक शब्द के भिन्न–भिन्न रूपों का विभिन्न अर्थों में प्रयोग

19.12.16 व्याकरणिक कारण

19.12.17 समास

19.12.18 शब्दों का अधिक प्रयोग

19.12.19 साधारण व्यवहार में आने वाले शब्द

19.12.20 दूसरी भाषा के शब्दों को अपनी भाषा में लेना

19.12.21 व्यक्तिगत योग्यता

19.12.22 सादृश्य

19.12.23 पुनरावृत्ति

19.0 उद्‌देश्य

इस इकाई में भाषा विज्ञान से सम्बन्धित विषय ध्वनि परिवर्तन तथा अर्थ परिवर्तन के कारणों का अध्ययन करेंगे। अभो तक आपने भाषा विज्ञान में भाषा, भाषा की प्रकृति, भाषा की विशेषताएँ, विकास, विभिन्न रूप, भाषा परिवर्तन की दिशाएँ और कारण, भाषा उत्पत्ति के सिद्धान्त आदि के बारे में जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। भाषा विज्ञान में ध्वनि विज्ञान, वाक्य–विज्ञान, रूप–विज्ञान, आदि विषय सम्मिलित हैं। इस इकाई को पढ़ने क बाद आप

- ध्वनि स्वरूप, ध्वनि की परिभाषा के बारे में बता सकेगें।
- भाषा ध्वनि – ध्वनिग्राम व संध्वनि के बारे में बता सकेंगे।
- ध्वनि –परिवर्तन क्या है ? उसके बारे में बता सकेंगे।
- ध्वनि–परिवर्तन के कारणों के बारे मे बता सकेगे।
- अर्थ का स्वरूप, अर्थ का महत्त्व क्या है ? इसके बारे में बता सकेंगे।
- अर्थ विज्ञान का महत्त्व क्यों है? इसके बारे में बता सकेगे
- अर्थ – परिवर्तन के कारणों के बारे में बता सकेंगे।

19.1 प्रस्तावना

ध्वनि–विज्ञान, भाषा विज्ञान का महत्त्वपूर्ण अंग है। इसका सम्बन्ध भाषा के भोतिक आधार ध्वनि से है। भाषा विज्ञान में व्यक्त ध्वनियों का ही अध्ययन किया जाता है। ध्वनि का अर्थ यहाँ उन ध्वनियों से है जिनका प्रयोग व्यक्ति बोलचाल में करता है तथा जिन्हें लिखित रूप में प्रकट करने के लिए विभिन्न लिपिचिह्नों का प्रयोग करता है। ध्वनि–विज्ञान के अन्तर्गत ध्वनि का अर्थ, ध्वनि की परिभाषा, उसकी उपयोगिता, ध्वनियों का वर्गीकरण, ध्वनि परिवर्तन की दिशाएँ, कारण तथा ध्वनि–नियमों का अध्ययन किया जाता है। इस इकाई में हम ध्वनि परिवर्तन के कारणों का अध्ययन करेंगे। भाषा के प्रत्येक अवयव – ध्वनि, अर्थ एवं वाक्य–विन्यास आदि का विकास व परिवर्तन बराबर रूप से होता रहता है। क्योंकि परिवर्तन सृष्टि का नियम है। ध्वनि परिवर्तन बहुत धीर–धीरे तथा अनजाने में होता है। इस तरह के परिवर्तनों में सदियाँ लग जाती हैं। ध्वनि–परिवर्तन के प्रमुख कारणों पर इस इकाई में व्यापक चर्चा की जा रही है।

इसी इकाई में हम आपकों अर्थ –परिवर्तन के कारणों के बारे में जानकारी देंगे। अर्थ–विज्ञान अर्थ का विज्ञान है। अर्थ विकास, अर्थ विकास के भद, अर्थ परिवर्तन के कारण और अर्थ भद आदि का वर्णनात्मक ऐतिहासिक, तुलनात्मक रूप में अध्ययन अर्थ–विज्ञान के द्वारा ही किया जाता है। ध्वनि–विज्ञान, पद–विज्ञान व वाक्य विज्ञान भाषा के शरीर हैं और

अर्थ उसकी आत्मा। अर्थ के बिना शब्द के स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं रह जाता। अर्थ के बिना भाषा का अस्तित्व संदिग्ध हो जाता है।

जिस प्रकार भाषा में प्रयुक्त ध्वनियाँ या पदों में परिवर्तन होता है उसी प्रकार भाषा में प्रयुक्त अर्थों में भो परिवर्तन होता है। अर्थ परिवर्तन का सम्बन्ध मनुष्य के मन से है। फलस्वरूप अर्थ–परिवर्तन के उतने ही कारण हो सकते हैं, जितनी हमारी मनोवैज्ञानिक क्रियाएँ होती हैं। इस प्रकार अर्थ–परिवर्तन के कारण असंख्य हैं। उन्ही कारणों का विशद अध्ययन हम इस इकाई म कर रहे है।

19.2 ध्वनि स्वरूप

भाषा–विज्ञान में ध्वनि–विज्ञान का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भाषा की सरंचना को समझने के लिए ध्वनि–विज्ञान की आवश्यकता रहती है। भाषा सम्बन्धी सिद्धान्तों के निरूपण और भाषा के व्यावहारिक अध्ययन के लिए ध्वनि–विज्ञान की जरूरत है। वर्तमान समय में ध्वनि विज्ञान की महत्ता बढ़ती जा रही है। ध्वनि विज्ञान का सम्बन्ध भाषा के भोतिक आधार ध्वनि से है। यह संस्कृत का शब्द है। संस्कृत में ध्वनि शब्द एक धातु है और उसी से ध्वनि शब्द बना है। यह शब्द ध्वन् धातु में इण् (इ) प्रत्यय लगाने से बनता है। धन शब्द का अर्थ है – शब्द करना या आवाज करना। यह भाषा की सूक्ष्मतम इकाई है। इसके अभाव में भाषा की कल्पना भो असंभव है। भाषा के विभिन्न अंगो में ध्वनि–विज्ञान महत्त्वपूर्ण है। सामान्य अर्थ में ध्वनि का तात्पर्य कानों में पकड़ने वाला कोई भो शब्द है। लेकिन भाषा–विज्ञान में ध्वनि का वही स्थान है जिसका सम्बन्ध भाषा से हो और जो सार्थक हो। इस प्रकार ध्वनि के दो अर्थ लिए जा सकते हैं। भाषा ध्वनि और ध्वनिग्राम।

भाषा–विज्ञान में ध्वनि का अर्थ –

भाषा–विज्ञान में ध्वनि शब्द का प्रयोग विशिष्ट अर्थ में होता है। मानव मुख से निकलने वाली ध्वनि का अध्ययन भाषा–विज्ञान में किया जाता है। अर्थात् वे ध्वनियाँ, जिनका प्रयोग मानव द्वारा अपनी भावाभिव्यक्ति के लिए वाणी द्वारा किया जाता है। भाषा–विज्ञान में जिस प्रकार भाषा के अन्तर्गत मात्र व्यक्त वाक् को ही स्वीकार किया जाता है, अव्यक्त वाक् को नहीं, उसी तरह ध्वनि के अन्तर्गत मात्र व्यक्त ध्वनियाँ ही ग्रहित होती हैं, अव्यक्त नहीं। संक्षेप में भाषा–विज्ञान में ''ध्वनि'' का अर्थ केवल उन ध्वनियों से है जिनका प्रयोग मानव वार्तालाप मे करता है और जिन्हें लिखित रूप में प्रकट करने के लिए विभिन्न लिपिचिह्नों का प्रयोग किया जाता है।

19.3 ध्वनि की परिभाषा –

विभिन्न विद्वानों ने ''ध्वनि'' शब्द के सामान्य अर्थ को प्रकट करते हुए भाषा–विज्ञान की दृष्टि से उसके विशेष अर्थ और स्वरूप को स्पष्ट करते हुए विभिन्न परिभाषाएँ दी हैं। प्रमुख विद्वानों की परिभाषाएँ इस प्रकार हैं–

1. **प्रो. डेनियल जोन्स** – ''ध्वनि मनुष्य के विकल्पहीन नियत स्थान और निश्चित प्रयत्न द्वारा उत्पादित और श्रोत्रेन्द्रिय द्वारा अविकल्प रूप से गृहीत शब्द लहरी है।''
2. **डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी**– ''मानव के ध्वनियंत्र द्वारा उत्पादित और निश्चित श्रावक गुणों से युक्त ध्वनियों को ही भाषा–ध्वनि या भाषण ध्वनि कहा जाता है''
3. **डॉ. भोलानाथ तिवारी** – ''भाषा ध्वनि वह ध्वनि है, जिसे मनुष्य अपने मुँह नियत स्थान से निश्चित प्रयत्न द्वारा किसी ध्येय को स्पष्ट करने के लिए उच्चरित करे और श्रोता उसे उसी अर्थ में ग्रहण करे।''

19.4 भाषा–ध्वनि, ध्वनिग्राम और संध्वनि–

भाषा–विज्ञान मे ध्वनि के लिए कई शब्दों का प्रयोग किया जाता है जैसे ध्वनि, ध्वनिमात्र, भाषा–ध्वनि, भाषाण–ध्वनि, ध्वनि–कुष, ध्वनि–श्रेणी, ध्वनि–ग्राम, संध्वनि आदि। अंग्रेजी में भो ध्वनि के लिए अनेक शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जैसे ध्वनिविज्ञान, ध्वनिविचार, ध्वनिग्राम संध्वनि। साधारण ध्वनि के लिए साउन्ड तथा भाषा या भाषण ध्वनि के लिए स्पीच साउन्ड शब्द का प्रयोग होता है।

ध्वनिग्राम और संध्वनि शब्दों का प्रयोग क्रमशः फोनेम (Phoneme) अलोफोन। (Allophone) के लिए किया जाता है। हिन्दी में ध्वनि–ग्राम के लिए ध्वनि–श्रेणो, स्वन–ग्राम, स्वनिम, ध्वनितत्व, वर्ण आदि शब्दों का भो प्रयोग होता है और संध्वनि के लिए ध्वनयंग, संस्वन आदि की भो।

भाषा ध्वनि किसी भाषा की लघुतम इकाई है और उसमें अनेक ध्वनिग्राम होते हैं। ध्वनिग्रामों मे कई संध्वनियाँ होती हैं जैसे– हिन्दी की समस्त वर्णमाला भाषा ध्वनि है और हर ध्वनि क, ख, ग, आदि ध्वनिग्राम। एक ध्वनि–ग्राम के उच्चारण में कई भद प्रतीत होते है, इन्हें ही संध्वनि कहते है।

19.5 ध्वनि की उपयोगिता –

भाषा के अध्ययन में ध्वनि और उसके नियमों का अत्यधिक प्रयोग किया जाता है तथा यह महत्त्वपूर्ण है। ध्वनि की उपयोगिता इस प्रकार है –

1. किसी भाषा को सीखने या सिखाने में ध्वनि–विज्ञान उपयोगी होता है। ध्वनि–विज्ञान द्वारा भाषा को शुद्ध रूप से सीखा जा सकता है।
2. ध्वनि विज्ञान के द्वारा जब किसी भाषा को हम सीखते हैं या सिखाते हैं उस समय यह बात स्पष्ट रूप से समझाई जा सकती है कि सीखने वाला किसी विशेष वर्ण का उच्चारण कौन–से उच्चारणोपयोगी अवयव से करें तथा उच्चारण के समय कैसा प्रयत्न करें।
3. भाषा विशेष को शुद्ध लिखने में भो ध्वनि–विज्ञान का उपयोग किया जाता है।
4. किसी प्राचीन भाषा की ध्वनियों के उच्चारण को ध्वनि–विज्ञान द्वारा ठीक से जान सकते है।

19.6 ध्वनि परिवर्तन

परिवर्तन संसार का नियम है और वही जीवन है। जीवन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें परिवर्तन होता रहता है। भाषा के प्रत्येक अवयव ध्वनि, अर्थ, वाक्य–विन्यास आदि में परिवर्तन बराबर होता है। इसका प्रमुख कारण प्रयत्न लाघव या सुविधा है। यह कारण ध्वनियों के परिवर्तन में विभिन्न प्रकार से काम करता है। मस्तिष्क की शिथिलता के कारण ''मंगलाचार''' के चार के स्थान पर चारि और कमाण्डर के स्थान पर कमंडल का उच्चारण होता है यह प्रयत्न लाधव का ही परिणाम है।

1. ध्वनि परिवर्तन बहुत धीर–धीरे होता रहता है। उदाहरण के लिए, 'अग्नि'' को आज हम आग के रूप में प्रयोग करते हैं। इसके बीच के रूप अग्गी, अग्नि, आगि आदि मिलते है। लेकिन अग्नि को अग्नि रूप में बनने के लिए न जाने कितनी सदियाँ लग गई होंगी।
2. ध्वनि–विकास धीरे–धीरे होता है और जब इसका विकास होता है तो उसकी खबर नहीं लगती अर्थात् यह विकास अनजाने में होता है और यह स्वतंत्र तथा व्यापक होता है। केवल एक समुदाय या कुछ समुदायों में यह विकास या परिवर्तन तो हो रहा हो और अन्य समुदाय उस परिवर्तन से अछूते हों ऐसा नहीं होता।

3. कई बार एक ही ध्वनि का विकास विभिन्न परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न रूप से होता है। पर बिल्कुल एक जैसी परिस्थिति अर्थात् एक ही परिस्थिति में केवल एक ही विकास होना चाहिए। ध्वनि की वाक्य अथवा शब्द में जो परिस्थिति होती है उसी के अनुसार ही ध्वनि का विकास होता है। यह देखना पड़ता है कि ध्वनि शब्द के आदि में है, मध्य में है या अन्त में, उसके आगे पीछे समान ध्वनियाँ हैं या असमान, स्वयं व्यंजन है या स्वर, मौखिक है या अनुनासिक। इन सभो बातों पर ध्यान देना पड़ता है। संस्कृत के स्नान, सन्त में स् है परन्तु प्राकृत में इन शब्दों के उत्तराधिकारी बाहाण, सत्त मिलते हैं। एक ही ध्वनि स् के दो रूप ह् व स् अलग–अलग स्पष्टता से दिखाई देते हैं।

19.7 ध्वनि–परिवर्तन के कारण –

भाषा वैज्ञानिकों ने यह प्रमाणित कर दिया है कि ध्वनि परिवर्तन यद्यपि धीरे–धीरे होता है, परन्तु यह निरन्तर होता रहता है। जैसे कृष्ण अब किशन या कान्हा हो गया। ध्वनि परिवर्तन पर दो प्रकार से प्रभाव पड़ता है –

1. आभ्यन्तर
2. बाह्य

आभ्यन्तर वर्ग में व्यक्ति का शारीरिक गठन, अनुकरण की क्षमता, अर्थ बोध की क्षमता आदि आते हैं। बाह्य कारणों में व्यवहार तथा मनष्य जीवन की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं भोगोलिक कारणों का समावेश होता है। आगे हम ध्वनि–परिवर्तन के आभ्यन्तर एवं बाह्य कारणों का विवेचन करेंगे –

19.7.1 प्रयत्न लाघव या मुख–सुख –

इसको उच्चारण सौकर्य या उच्चारण सुविधा भो कहते है। यह ध्वनि परिवर्तन का सबसे प्रमुख कारण है। यह कारण उच्चारण की सुविधा से जुड़ा हुआ है। मनुष्य स्वभाव से ही कम प्रयत्न करके ज्यादा फायदा उठाना चाहता है। थोडे से प्रयत्न से ही भावाभिव्यक्ति करना चाहता है। मुख की सुविधा के कारण इसे मुख सुख व उच्चारण की सुविधा के कारण इसे उच्चारण सुविधा भो कहते हैं। मुख– सुख या उच्चारण की सुविधा के कारण अनेक क्लिष्ट ध्वनियाँ सरल रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। अर्थात् कठिन शब्दों को सरल बनाया जाता है। जैसे – कर्म–काम, सत्य –सच।

मुख–सुख या प्रयत्न लाघव के कारण होने वाले ध्वनि–परिवर्तन अनेक दिशाओं में होता है। यह ध्वनि–परिवर्तन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारण है। इसके कारण कई बार किसी ध्वनि का लोप भो हो जाता है। जैसे स्थल से थल। कई बार कोई नई ध्वनि भो आ जाती है, जैसे– वधू से वधूटी। इस प्रकार इसमें कभो आगम होता है कभो लोप। विपर्यय, समीकरण, विषमीकरण, सघोषीकरण, अघोषीकरण, संधि तथा मात्रा–भद आदि परिवर्तन प्रायः प्रयत्न लाघव के कारण होते हैं।

19.7.2 अनुकरण की अपूर्णता –

हम भाषा को अनुकरण के द्वारा सीखते हैं किन्तु स्वरयंत्र की विभिन्नता के कारण अनुकरण पूण नहीं हो पाता। दो या दो से अधिक व्यक्ति एक ध्वनि का उच्चारण समान रूप से नहीं कर पाते हैं किन्तु उन अलग–अलग उच्चारणों में अन्तर इतना सूक्ष्म होता है कि सामान्यतः वह स्पष्ट नहीं होता है। यह अन्तर बाद में अधिक प्रभावशाली बनकर भाषा में परिवर्तन उपस्थित कर देते ह। अज्ञानता के कारण भो अशुद्ध उच्चारण होता है। अज्ञानता के कारण अनेक शब्द अशुद्ध उच्चारित होने लगते है। उदाहरणार्थ – कोर्ट साहब,के बजाय कोट साब, कानूनगो का कानी गोह। बच्चे भो अनुकरण की अपूर्णता के कारण ध्वनि परिवर्तन कर देते हैं जैसे – अमरूद का अरमूद मतलब का मतबल आदि।

19.7.3 वाग्यंत्र की भिन्नता –

जिस प्रकार संसार में सभो व्यक्तियों की शारीरिक बनावट भिन्न–भिन्न होती है उसी प्रकार सभो मनुष्यों का वाक्–यंत्र भो भिन्न–भिन्न होता है। यही कारण है कि प्रत्येक व्यक्ति एक जैसा उच्चारण नहीं कर पाते। वाक्–यंत्र की भिन्नता के कारण एक व्यक्ति श, ष, स इन तीनों
ध्वनियों का सही उच्चारण नहीं कर पाता। थोड़ा–थोड़ा अन्तर कालान्तर में बढ़कर पूर्णयता बदल जाता है। ऋ का उच्चारण वर्तमान में ''री'' हो गया।

19.7.4 अशिक्षा तथा अज्ञान–

प्राचीन समय में भारत में शिक्षा के द्वारा शुद्व उच्चारण सिखलाया जाता था। यह कारण है कि शिक्षितों की भाषा में परिवर्तन बहुत ही कम दिखाई देता है, किन्तु अशिक्षा के कारण मनुष्य भाषा में प्रयोग होने वाले ध्वनियों के शुद्ध रूप से परिवर्तन नहीं हो पाते। अशिक्षितों का क्षेत्र बोलचाल की भाषा तक ही सीमित रहता है। फलस्वरूप ध्वनियों का उच्चारण दोषपूर्ण होता है। अशिक्षा के कारण ही गार्ड का गारड हो गया, कम्पाउन्डर बदल कर कम्पोडर, लैनटर्न का लालटेन तथा गवर्नमेन्ट का गोरमेन्ट हो गया।

19.7.5 भावातिरेक –

मनुष्य संवेदनशील एवं भावुक प्राणी है। जीवन में अनेक अवसरो पर वह प्रेम, क्रोध व घृणा आदि भावों से आंदोलित होता रहता है। भावातिरेक के कारण वह भावुक हो जाता है और वह शब्दों का उच्चारण अस्वाभाविक रूप में करता है। परिणामस्वरूप ध्वनियों में परिवर्तन हो जाता है। जैसे–बेटी से बिटिया, सतीश से सत्तो, बहू से बहुरिया, राम से रामू आदि में ध्वनि–परिवर्तन भावातिरेक के कारण हुआ है।

19.7.6 भामक व्युत्पत्ति –

भामक व्युत्पत्ति से होने वाले परिवर्तन के मूल में अज्ञानता है। अनुकरण की अपूर्णता के अन्तर्गत इसे इसलिए नहीं रखा क्योंकि मनुष्य जान बूझकर या भमवश अशुद्व उच्चारण करता है। भामक व्युत्पत्ति में यह आवश्यक है कि यहाँ उच्चारित शब्द के समान अन्य शब्द का भो होना जरूरी है।

अर्थात् अनेक व्यक्ति जब किसी अपरिचित शब्द के संसर्ग में आते हैं तब उससे मिलता–जुलता शब्द यानी परिचित शब्द का ही प्रयोग करने लगता है जो उसे पहले से ज्ञात हाता है। उदाहरण के लिए अरबी का ''इंतकाल'' हिन्दी में ''अंतकाल'' हो गया। ''पाउरोटी'' का ''पाव रोटी'' ''लाइब्रेरी'' का ''रायबरेली'' आदि।

19.7.7 लघुकरण की प्रवृत्ति–

लघुकरण की प्रवृत्ति से भो ध्वनि परिवर्तन होता है। लम्बे–लम्बे शब्दों को संक्षिप्त या लघु कर के प्रयोग करने की मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। इसके पीछे भो प्रयत्न लाघव की प्रवृत्ति है। यह पुरानी प्रवृत्ति है। वार्तिककार कात्यायन ने भो यह निर्देश दिया था नामों कि आदि में एक अंग के उच्चारण से भो काम बन सकता है। जैसे– उपाध्याय जी – ओझा जी

19.7.8 शीघ भाषण–

शीघ्र बोलने के कारण भो ध्वनि–परिवर्तन होता है। इस प्रयोग में मध्यगत ध्वनियों का प्रायः लोप हो जाता है। इसके पीछे लघूकरण की प्रवृत्ति भो देखी जाती है। कई बार जैसा लिखा जाता है वैसा विधिवत पढ़ा नहीं जाता। यथा – पद्मादत्त–पद्मा, दादा–दद्दा, भातृजाया–भोजी एक गाँव–एग्गाँव, पंडित जी–पंडीजी, उन्होंने–उन्ने, किसने–किन्ने, अबही–अभो आदि।

19.7.9 मात्रा, सुर तथा बलाघात –

मात्रा, सुर तथा बलाघात के कारण भो ध्वनियों में परिवर्तन हो जाता है। इन तीनों में बलाघात का महत्त्व सर्वाधिक है। प्रायः हम देखते हैं कि बलाघात के कारण जिस ध्वनि के

उच्चारण पर अधिक बल दिया जाता है, उसके पास की ध्वनि, कमजोर पड़ जाने से बाद में लुप्त हो जाती है जैसे– आभ्यन्तर से भोतर। यहाँ पर 'भ'' पर बलाघात के कारण 'अ'' ध्वनि का लोप हो गया है

इसी प्रकार से सुर के कारण भो ध्वनि परिवर्तन हो जाता है। जैसे अट्ट का आठ, पुत्त का पूत, कुष्ट से कोढ़, बिल्व से बेल

उच्चारण की दृष्टि से एक ही क्रम में आने वाले दो दीर्घाक्षर कठिन हो जाते हैं इसलिए एक ह्रस्व हो जाता है। जैसे– बाजार–बजार, चालाक–चलाक

19.7.10 काव्यात्मकता–

काव्यात्मकता के कारण भो ध्वनि–परिवर्तन हो जाता है। कविगण प्रायः पादपूर्ति माधुर्य तथा लालित्य आदि के कारण ''जहान'' को जहाना, ''चरण'' को ''चरन'' और ''काजल'' को ''काजर'' तथा ''यशोदा'' को ''जसोदा'' आदि के रूप में प्रयोग करते हैं। बाद में ये ही शब्द भाषा के अंग बन जात हैं।

19.7.11 श्रवणेन्द्रियों की भिन्नता –

ध्वनि जब उच्चारित होती है तब वह सुनी जाती है। ध्वनि को सुनने वाले भिन्न–भिन्न होते हैं। सुनने की विभिन्नता के कारण भो उच्चारण में अंतर आता है और भिन्नता कालान्तर में दृष्टिगोचर होने लगती है। हालांकि भाषा वैज्ञानिक इस कारण को महत्त्वपूर्ण नहीं मानते।

19.7.12 विभाषा का प्रभाव–

जब एक राष्ट्र, जाति या समुदाय जब दूसरे राष्ट्र, जाति या समुदाय के सम्पर्क में आता है तो विचार–विनिमय होता है। वे अनजाने ही एक दूसरे की ध्वनियों को भो प्रभावित करते हैं।

19.7.13 सादृश्य –

कुछ शब्द ऐसे भो हैं जो दूसरे के सादृश्य पर अपनी ध्वनियाँ परिवर्तित कर लेते हैं। जैसे – 'तुझ' शब्द के सादृश्य पर 'मुझ' हुआ। 'स्वर्ग' शब्द के सादृश्य पर 'नर्क' हुआ।

19.7.14 लिखने के कारण –

ध्वनियों को लिखने के कारण भो उसमें परिवर्तन हो जाता है। जैसे अग्रेजी में गुप्त, मिश्र, कृष्ण व अशोक को गुप्ता, मिश्रा, कृष्णा व अशोका लिखा जाता है। उसी के परिणामस्वरूप हिन्दी में भो उन्हें गुप्ता, मिश्रा कहा जाने लगा।

19.7.15 स्वच्छन्दता –

कवि तथा साहित्यगण अपने काव्य में नए–नए अर्थ देने के लिए कभो–कभो नए–नए शब्दों की रचना भो कर लेते हैं इस कारण भो ध्वनि–परिवर्तन हो जाता है। कभो कभो शब्दों में कोमलता लाने के लिए भो ध्वनियों में परिवर्तन हो जाता है। जैसे – कमल से कमलु।

19.7.16 भौगोलिक प्रभाव –

भोगोलिक परिस्थितियों के कारण भो ध्वनियों में परिवर्तन हो जाता। कुछ विद्वानों का मानना है कि शीतप्रधान देशों की ध्वनियां संवृत्त की ओर अग्रसर होती हैं तथा ग्रीष्मप्रधान देशों की ध्वनियाँ निवृत्ति की ओर इसके अलावा जिस भ–भाग की भाषा के बोलने वाले व्यापार या अन्य किसी कारण से बाहय सम्पर्क में अधिक रहते हैं, उस भ–भाग की भाषा में परिवर्तन अपेक्षाकृत अधिक होते हैं। जैसे– हिन्दी की पहाड़ी बोलियों में प्रायः 'स' को 'श' उच्चारित किया जाता है। यथा – 'सुरत'– 'शुरत', 'संदेश' – 'शंदेश'। इस प्रकार शीतलता, उष्णता, अधिक या कम विस्तृत होना आदि भोगोलिक कारण भो ध्वनियों में परिवर्तन हो जाता है।

19.7.17 सामाजिक एवं राजनैतिक प्रभाव –

सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों के प्रभाव के कारण भो ध्वनियों में परिवर्तन होता रहता है। जब देश मे सुख–शांति का वातावरण रहता है तब उन दिनों में शुद्ध बोलने का प्रयास होता ह। फलस्वरूप ध्वनियों में परिवर्तन की संभावन कम रहती है। अव्यवस्था, अप्रसन्नता एवं संकटपूर्ण तथा दुःखपूर्ण वातावरण में प्रायः लोग धीरे – धीरे बोलते हैं। ऐसे में अनेक असावधानियाँ होती हैं। उसी प्रकार यदि युद्ध का वातावरण है तब बोलने की गति बढ़ जाती है। शब्द की कुछ ध्वनियों पर अधिक जोर एवं बल दिया जाता है जिससे शेष ध्वनियाँ लुप्त हो जाती हैं। भाषावैज्ञानिकों के अनुसार भो युद्ध के वक्त भाषा के परिवर्तन की गति अधिक तेज होती है। युद्ध के समय में – बॉबार्डमैट – बम्बबारी, कर्फ्यू आर्डर – कर्फ्यू इत्यादि।

19.7.18 एतिहासिक प्रभाव –

इतिहास में महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावशाली घटनाओं का वर्णन होता है। इन घटनाओं के फलस्वरूप शब्दावली का आदान–प्रदान होता है। इस प्रक्रिया में ध्वनि–परिवर्तन भो स्वाभाविक है। जैसे– सोक्रेटिन का सुकरात प्लेटो का अफलातुन, ऐरिस्टोटल का अरस्तु आदि।

17.7.19 अति सजगता –

कभो–कभो कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अति शुद्ध उच्चारण करने में अति सजग रहते हैं फलस्वरूप वे अशुद्ध उच्चारण करने लगते हैं। अज्ञानता का भो महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। जैसे इच्छा–इक्षा, छात्र–क्षात्र, बहुत–बहोत आदि।

19.7.20 विदेशी ध्वनि का पभाव –

जब कोई विदेशी भाषा या दूसरी भाषा के सम्पर्क में आता है और उस दूसरी भाषा में प्रयुक्त ध्वनियाँ जब उसकी स्वयं की भाषा में नहीं रहती तब वह उन नवीन ध्वनियों को अपनाने के बजाय अपनी भाषा में उनसे मिलती–जुलती ध्वनि का प्रयोग करने लगता है। भारतीय भाषाओं में विदेशी भाषा जैसे यूनानी, पुर्तगाली, जापानी, चीनी, अंग्रेजी, अरबी आदि भाषाओं के शब्दों की ध्वनियों में ऐसा ही हुआ है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के ओगस्ट का अगस्त, रिपोर्ट को रपट आदि।

19.7.21 स्वयंभ् या अकारण –

कई ध्वनियाँ ऐसी हाती है जिनमें अकारण परिवर्तन होता है। इन्हें स्वयंभ् भो कहा जाता है। इस प्रकार जो परिवर्तन होता है उसका कोई निश्चित कारण बताया नहीं जा सकता। उदाहरण के लिए सत्य से सॉच, अर्चि से आंच, सर्प से सांप।

19.8 संक्षेप

आभ्यन्तर एवं बाह्य रूप में ध्वनि–परिवर्तन के अनक कारण हैं। उन सभो कारणों को यहाँ वर्णन करना असंभव है। कभो–कभो तो एक ही ध्वनि परिवर्तन के अनेक कारण उत्तरदायी होते हैं। भाषा का प्रवाह सदैव सरलता की ओर रहता है यही कारण है कि ध्वनि में परिवर्तन होते रहते हैं।

अर्थ परिवर्तन के कारण

19.9 अर्थ का स्वरूप –

अर्थ भाषा की आत्मा है और उससे सम्बन्धित वैज्ञानिक अध्ययन को अर्थ–विज्ञान कहते है। इसमें भाषा की सार्थक इकाई का अध्ययन किया जाता है जो मानव के भावो के आदान–प्रदान में सहयोगी होती है। अर्थ–विज्ञान के अन्तर्गत अर्थ का स्वरूप, अर्थ–बोध, शब्द–अर्थ सम्बन्ध, अर्थ परिवर्तन की दिशाएँ, अर्थ परिवर्तन के कारण आदि पर विचार किया जाता है।

शब्द भाषा की लघुतम, स्वतंत्र, अर्थवान इकाई है, इसलिए अर्थ–अध्ययन के समय शब्द पर विचार करना आवश्यक है। शब्द और अर्थ में घनिष्ठ सम्बन्ध है। भर्तृहरि ने कहा है कि संसार में ऐसा कोई ज्ञान नहीं है जो शब्द–ज्ञान के बिना संभव हो। समस्त ज्ञान की प्रतीति शब्द के माध्यम से ही सम्भव है।

''न सोडस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमाहते।
अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्व शब्देन भास्ते।'',

बाह्य जगत के व्यवहार का साधन शब्द–शक्ति है, वहीं आन्तरिक हर्ष – विषाद आदि भावों का ज्ञान रूप है। विश्व के सभो प्राणियों में शब्द–शक्ति रूपी चैतन्यता विद्यमान रहती है। यहाँ तक कि गूंगा व्यक्ति जो शब्दों का उच्चारण नहीं कर सकता, फिर भो उसके अन्तरतम में उठने वाले भावों में अनेक शब्द एक साथ उसे चेतना शक्ति प्रदान करते हैं। समाज म जो शब्द का महत्त्व है उसका आधार अर्थ है। महर्षि पतंजलि ने अर्थ को शब्द की आंतरिक शक्ति के रूप में माना है। पाश्चात्य विद्वान डॉ. शिलर ने अर्थ को वैयक्तिक मानते हुए कहा है कि अर्थ उस व्यक्ति पर आधारित होता है जो किसी प्रकार का कुछ भाव ग्रहण करना चाहता ह।

पाश्चात्य विद्वान सम्बन्ध को अर्थ के रूप में मानते है तथा भारतीय विद्वान प्रतीत को अर्थ मानते हैं।

अर्थ के बिना शब्द के स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं रह जाता। अर्थ के बिना भाषा का अस्तित्व संदिग्ध हो जाता है। शब्द यदि शरीर है तो अर्थ उसकी आत्मा है। शब्द के उच्चारण से जिसकी प्रतीति होती है वही अर्थ है। भर्तृहरि ने भो ऐसा ही कहा है, जैसा कि हमने ऊपर विवेचन किया है फिर भो भर्तृहरि की बात अपनी जगह सत्य प्रतीत होने के बावजूद भो आलोचना की अपेक्षा रखती है क्या 'अर्थ'' केवल शब्द का ही होता है। ''राम शर्म के मार पानी–पानी हो गया'' या ''उसका हृदय पत्थर का है'' में ''पानी–पानी हो'' या ''पत्थर'' केवल शब्द नहीं हैं। यहॉ अर्थ की अपेक्षित प्रतीति केवल 'पानी'' या 'पत्थर'' से नहीं हो सकती यह प्रतीति ''पानी–पानी होना'' या ''हृदय पत्थर का'' से ही हो सकती हैं। अतः कहा जा सकता है कि ''' किसी भो भाषिक इकाई वाक्य, वाक्यांश, रूप, शब्द, मुहावरा आदि को किसी भो इन्द्रिय प्रमुखताः कान, आँख से ग्रंहण करने पर जो प्रतीति होती है, वहीं अर्थ है।''

19.10 अर्थ का महत्त्व –

प्राचीनकाल से ही भारत में प्रत्येक ब्राह्मण के लिए वेदों का ज्ञान अनिवार्य माना जाता था –

''ब्राीणेन निष्कारणो धर्मः षडंगो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च।'' (महाभाष्य)

अर्थात ब्राह्मणों को बिना कारण छः अंग वाले वेद को पढ़ना तथा जानना चाहिए।

जब कुछ ब्राह्मण बिना अर्थ के ही वेदों के पाठ से सन्तुष्ट रहने लगे तब ''यास्क'' ने उनकी निन्दा की तथा ऐसे वेदपाठी ब्राहमणों को 'यास्क'' ने ठूँठ के समान कहा है –

'स्थाणुरयं भारहारः किलामूदधीत्य वेदं न विजानाति याऽर्थम्।
योऽर्थम् इत् सकलं भद्रमश्नुते नामकेति ज्ञान–विधूतपाप्मा।' (निरूक्त)

अर्थात् बिना अर्थ जाने वेदपाठी केवल बोझा ढोता है। जो अर्थज्ञानपूर्वक वेदों का अध्ययन करता है, वह दोनों लोकों में कल्याण का भागी होता है। 'निरूक्त' ग्रन्थ में यास्क ने अर्थ को ही महत्त्व दिया।

19.11 अर्थ–विज्ञान का क्षेत्र

शब्द और अर्थ का अभद सम्बन्ध है। अर्थ – विज्ञान के अन्तर्गत हम शब्द और अर्थ का सम्बन्ध, भाषा में भाव व विचार करने के साधन, उनकी सीमाएँ, भाषा में प्रयुक्त शब्द के

अनेकार्थक, अर्थों में पारस्परिक सम्बन्ध आदि का अध्ययन किया जाता है। किसी शब्द के अर्थ में कालान्तर में होने वाले परिवर्तन का विचार ही सामान्यतः अर्थ –विज्ञान का विषय है।

19.12 अर्थ परिवर्तन के कारण

जिस प्रकार भाषा में प्रयुक्त ध्वनियाँ या पदों में परिवर्तन होता है उसी प्रकार भाषा में प्रयुक्त शब्दों के अर्थों में भो परिवर्तन होता है। अर्थ परिवर्तन का मूल कारण कौन–सा है यह ढूंढना मुश्किल हैं। अर्थ परिवर्तन का सम्बन्ध मनुष्य के मन से हैं फलस्वरूप अर्थ–परिवर्तन के उतने ही कारण हो सकते हैं जितनी हमारी मनोवैज्ञानिक क्रियाएँ होती हैं। इस प्रकार अर्थ–परिवर्तन के कारण असंख्य हैं। अनेक शब्दों के अर्थों को देखने से यह पता चलता है कि अर्थ परिवर्तन सदैव होते रहते है। जैसे – ''कुशल'' शब्द का मूल अर्थ था ''कुशा लाने वाला'', किन्तु बाद में इसका अर्थ हो गया ''चतुर''। इसी प्रकार ''प्रवीण'' शब्द का मूल अर्थ था ''वीणा बजाने में पटु'', किन्तु बाद में इसका अर्थ हो गया किसी भो विषय में ''पटु'' होना लिया गया। संस्कृत में ''मृग'' शब्द का अर्थ ''जंगली पशु'' हाता है बाद में जंगली पशुओं के शिकार को भो ''मृगया'' कहा जाने लगा। बाद में ''मृग'' का अर्थ हो गया ''हरिण''। आगे अर्थ–परिवर्तन के प्रमुख कारणों पर विचार किया जा रहा है –

19.12.1बल प्रयोग या बल का अपसरण –

किसी एक शब्द के उच्चारण में जब हम एक शब्द पर अधिक जोर देते हैं तो उस शब्द की दूसरी समकक्ष ध्वनियाँ कमजोर पड़ जाती हैं। इस क्रिया मे अर्थ में बल प्रधान पक्ष से हटकर कमजोर पक्ष पर पड़ जाता है। जैसे ''गोस्वामी'' शब्द को लेंवे। पहले गायों के स्वामी के लिए ''गोस्वामी'' शब्द का प्रयोग किया जाता था अब सभो प्रकार के माननीय और आदरणीय व्यक्तियों के लिए यह शब्द प्रयुक्त होने लगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि बल अपसरण के कारण गोस्वामी शब्द ''गायों के स्वामी'' से हटकर ''माननीय धार्मिक व्यक्ति के लिए होने लगा।''

19.12.2पीढ़ी परिवर्तन के कारण –

पीढ़ी परिवतन के कारण भो कई बार अर्थ परिवर्तन हो जाता है। क्योकि मनुष्य कभो भो पूर्ण एवं शुद्ध अनुकरण नहीं कर सकता। उसके अनुकरण में कुछ न कुछ कमी रह जाती है। उदाहरण के लिए ''पत्र'' शब्द को हम लेते हैं। प्रारम्भ में लिखने के लिए उचित साधन या सामग्री न होने के कारण लोग पत्ते या पत्र पर लिखने लगे। जब दूसरी पीढ़ी आई तब उसने सोचा कि जिस पर कुछ लिखा जाता है वही पत्र है। इस प्रकार पत्र पत्र लेखन का सूचक बन गया।

19.12.3प्रकरण विभिन्नता –

हम सभो जानते हैं कि एक ही शब्द के अनेक अर्थ होते हैं। परन्तु प्रसंगानुकूल एवं प्रकरण के कारण हम शब्द का वैसा ही अर्थ ले लेते हैं जैसा सामने वाला व्यक्ति किसी वाक्य में किसी विशेष अर्थ के लिए करता है। जैसे रसोई में बैठा हुआ रसोईया ''सैन्धवम् आनय''' जब कहता है तो उसका आशय हम ''नमक'' से लेते हैं न कि घोड़ो से।

इसके अलावा जब एक व्यक्ति एक शब्द को जो जिस अर्थ में लेता है तब यह जरूरी नहीं है कि दूसरा भो उस शब्द का अर्थ उसी रूप में करें। जनसमुदाय की धनिष्ठता जितनी कम होती जाएगी उतना ही अर्थ परिवर्तन आता जाएगा। संस्कृत में ''विहार'' शब्द का प्रयोग विचरण के लिए किया जाता है वहीं पालि में निवास स्थान के लिए इसका प्रयोग करते है।

19.12.4वातावरण में परिवर्तन के कारण–

मनुष्य के जीवन में वातावरण का प्रभाव पड़ता हैं। वातावरण भो कई दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। जैसे –

19.12.4.1 भौगोलिक –

कई बार भोगोलिक परिवर्तन के कारण भो अर्थ परिवर्तन होता है। संस्कृत में ''उष्ट्र'' शब्द का प्रयोग भसे के लिए होता था, बाद में वहीं शब्द ऊंट के लिए प्रयोग होने लगा। उत्तर प्रदेश में कच्चे और पके हुए दोनों प्रकार के चावलों के लिए ''चावल'' शब्द का प्रयोग किया जाता है। वही महाराष्ट्र तथा गुजरात में पके हुए चावल को ''भात'' कहा जाता है।

19.12.4.2 सांस्कृतिक –

एक सभ्यता व संस्कृति का प्रभाव दूसरी सभ्यता व संस्कृति पर पड़ता है फलस्वरूप अर्थ परिवर्तन हो जाता है। जैसे हमारी भारतीय संस्कृति में ''नाचना–गाना'' शब्द का प्रयोग अशोभनीय माना जाता है लेकिन पाश्चात्य सभ्यता के कारण Dance and Music अच्छा माना जाने लगा।

19.12.4.3 सामाजिक –

कई बार सामाजिक परिवर्तन के कारण भो अर्थ परिवर्तन हो जाता है। जैसे Mother और Sister का अर्थ सामान्यतः माता व बहन होता है किन्तु गिरिजाघरों में इसाई उपदेशिका के लिए Mother व अस्पतालों में नर्स के लिए Sister शब्द का प्रयोग किया जाने लगा। जब कोई भाषाण में भाईयों और बहनों शब्द का प्रयोग करता है तब उसका अभिप्राय पुरूषों और स्त्रियों से होता है।

19.12.4.4 भौतिक –

भोतिक साधनों के परिवर्तन के साथ वस्तुओं क नामों में भो परिवर्तन आ जाता है। अंग्रेजी में गिलास शब्द का अर्थ है कांच किन्तु हिन्दी में पीतल, चांदी, तांबा, स्टील, प्लास्टिक के बने हुए पीने के काम आने वाले सभो पात्रों के लिए गिलास शब्द का प्रयोग होता है।

19.12.4.5 प्रथा सम्बन्धी परिवर्तन –

कई बार प्रथा सम्बन्धी परिवर्तन आने पर भो शब्द का अर्थ बदल जाता है। प्रारम्भ में यजमान शब्द का प्रयोग यज्ञ करने वाले पंडित के लिए होता था। बाद में 'यजमान' शब्द का प्रयोग बुरे या निम्न जाति के लोगो के लिए होने लगा।

19.12.5नम्रता प्रदर्शन –

सभ्य समाज के लोग नम्रता प्रदर्शित करते हुए भो अर्थ में परिवर्तन कर देते हैं। जैसे – 'पृथ्वीनाम', 'अन्नदाता', ''जहाँपनाह'' आदि शब्द नम्रता को प्रदर्शित करते हैं। जैसे– ''आपका दौलतखाना कहाँ'', ''अन्नदाता तो आप ही हैं।'' आदि कथन नम्रता प्रदर्शन के लिए ही प्रयोग में लेते हैं।

19.12.6अशोभन के लिए शोभन भाषा का प्रयोग –

अशोभनीय तथा अवांछनीय बातो के लिए शोभनीय शब्दो का कई बार प्रयोग किया जाता है। फलस्वरूप अर्थ–परिवर्तन हो जाता है। इसके कई भद हैं–

19.12.6.1 अशुभ या बुरा –

कई बार अशुभ सूचक शब्दों को सीधे न कहकर उन्हें शुभ शब्दों द्वारा प्रकट किया जाता है। उदाहरण के लिए किसी विधवा के लिए चूड़ी फूटना या सिंदूर पोंछना कहा जाता है। किसी व्यक्ति के मर जाने पर स्वर्गवास होना, पंचतत्व को प्राप्त होना, बैकुंठ लाभ होना, परधाम को जाना जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

19.12.6.2 कटुता या भयंकरता –

कटुता या भयंकर कारणों से भो अर्थ–परिवर्तन हो जाता हैं। जैसे रात के समय सांप की जगह कीड़ा या रस्सी कहा जाता है।

19.12.6.3 अश्लीलता सूचक –

समाज में अश्लीलता सूचक शब्दों का प्रयोग अच्छा नहीं माना जाता। अश्लीलता सूचक भावों को प्रकट करने के लिए सभ्य शब्द कहे जाते हैं। जैसे गभवती को प्रत्यक्ष न कह कर ''पाँव भारी होना''' या ''उम्मीद से है'' ऐसा कहा जाता हैं। पाखाना जाने को मैदान जाना, निवृत्त होना, बाहर जाना, शौच जाना, विलायत जाना कहा जाता है।

19.12.6.4 अंधविश्वास –

अंधविश्वास के कारण भो अर्थ परिवर्तन हो जाता है हमारे भारतीय समाज मे पत्नी अपने पति का नाम इसलिए नहीं लेती कि उसे ये भय रहता है कि कहीं उसके पति की उम्र कम न हो जाए। इसलिए पति को वह, उन्होंने, ए.जी., सुनोजी, गुड़िया के पापा आदि शब्दों से सम्बोन्धित करती है।

19.12.6.5 हीनता –

कभो कभो हीनता न दिखाई दे इस वजह से भो शिष्टाचारवश सीधे शब्द नहीं कहे जाते हैं। जैसे कोई अंधा है तब उसे अंधा न कहकर सूरदास कहा जाता है। इसी प्रकार हीन कार्य करने वालो को भो अच्छे नाम दिये जाते हैं। जैसे चमार – रामदास, मेहतर – जमादार, रसोइया को महाराज आदि।

19.12.7 व्यंग्य के कारण –

व्यंग्य के कारण भो अर्थ परिवर्तन हो जाता है जिस आशय के लिये व्यंग्यात्मक शब्द का प्रयोग किया जाता है वही शब्द बाद में उसी अर्थ के लियें प्रयुक्त होने लगते हैं। जैसे मुर्ख को पूरे पंडित या पूरे देवता कहा जाता है, झूठ बोलने वाले को सत्यवादी हरिशचन्द्र या युधिष्ठर कहा जाता है। वे सभो व्यंग्यार्थ ही है।

19.12.8 सामान्य के लिये विशेष का प्रयोग –

कई बार ऐसा देखने को मिलता है कि एक वस्तु विशेष सामान्य अथवा जातीय वर्ग का प्रतीक बन जाती है अर्थात शब्दों का अर्थ अपने सीमित क्षेत्र से निकल कर विस्तार को प्रापत होता है। आवश्यकता पडने पर नाम विशेष से सामान्य की ओर चला जाता है। जैसे ''स्याही'' शब्द का मूल अर्थ है – काली स्याही, पर अब किसी भो प्रकार की लिखने वाली स्याही। जैसे – काली स्याही, नीली स्याही, लाल स्याही। ''तेल'' शब्द का भो अर्थ विस्तार हो गया। पहले तेल शब्द का अर्थ ''तिल का सार होता था लेकिन अब सब प्रकार के तेल के लिये यह शब्द प्रयुक्त होने लगा जैसे सरसो का तेल, मूंगफली का तेल, मछली का तेल यहां तक कि मिट्टी का तेल भो कहते हैं।

19.12.9 अज्ञान या पांडित्य प्रदर्शन –

इसके कारण भो अनेक शब्दों के अर्थ में परिवर्तन हो जाता है। प्रारम्भ में ''असुर'' शब्द देवतावाचक था किन्तु बाद में ''अ'' को निषेधात्मक मानकर ''सुर'' देवतावाची हो गया तथा ''असुर'' शब्द राक्षस के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा जो भान्तिमूलक ही है। हिन्दी में क्रान्ति के स्थान पर उत्क्रान्ति, ''ज्ञान'' पर ''अभिज्ञान'' ऐसे शब्द हैं जिनके पीछे अपनी विद्वत्ता एंव पांडित्य प्रदर्शन की भावना है। इस प्रकार के शब्द धीरे – धीरे भाषा में प्रचलित होने लग जाते है तथा अर्थ परिवर्तन का कारण बनते हैं।

19.12.10 शब्दार्थ की अन्तनिर्हित अनिश्चितता –

भाषा के कई शब्द ऐसे होते हैं, जिनके अर्थ निश्चित नहीं होते। जिनसे अर्थों में इतनी समानता होती है कि उन्हे पर्यायवाची कह सकते है परन्तु भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार पर्यायवाची जैसा एक भाषा में कुछ नहीं होता। जैसे– क्लेश, यंत्रणा, यातना, पीडा, वेदना के अलग–अलग अर्थ बताना कठिन है। विकास, प्रगति, उन्नति, उत्कर्ष आदि शब्दों के भो अलग–अलग अर्थ बताना कठिन है। ऐसे शब्दों का प्रयोग उपयुक्तता के आधार पर किया जाता है।

19.12.11 साहचर्य के कारण –

संसर्ग या साहचर्य संबंध के कारण भो अर्थ परिवर्तन पर प्रभाव पडा है। ''सूरत'' गुजरात के एक स्थान का नाम है। इसी जगह सर्वप्रथम विदेशी तम्बाकू आया था अतः ''सूरत'' के संसर्ग के कारण तम्बाकू को भो ''सूरती'' कहा जाने लगा। ''सिंध'' में अच्छा नमक व घोडा होने के कारण दोनो के लिये सैन्धव ही कहा जाने लगा। गन्ने का सत्व भो चीन देश के साहचर्य से ही ''चीनी'' कहलाया।

19.12.12 नामकरण –

प्रयत्न लाघव जहाँ भाषा परिवर्तन का कारण था वहीं यह अर्थ परिवर्तन में भो महत्त्वपूर्ण है। मनुष्य नवीन वस्तुओं, नवीन नामों आविष्कारों आदि के लिये सीमित शब्दों का प्रयोग करता है।

19.12.13 धारणा भद –

व्यक्ति के स्वयं के संस्कार, परिवेश, शिक्षा, जीवन शैली, आदि के कारण शब्दों के बारे में जो धारणाएँ बनती है वह अलग अलग तरह की होती हैं। जैसे धर्म–अधर्म तथा पाप–पुण्य की धारणा प्रत्येक व्यक्ति के लियें अलग अलग रहती है। एक व्यक्ति के लियें जो धर्म है वह दूसरे के लिये भो धर्म हो। मुसलमान के लिये काफिर वह है जो मुस्लिम या इस्लाम धर्म को नही मानता। जबकि यथार्थ में काफिर का अर्थ है – ईश्वर को न मानने वाला। इस प्रकार यहां विसंगति है।

19.12.14 शब्दार्थ के एकतत्व की प्रधानता –

कई बार शब्द के पूरे अर्थ को ध्यान में रखकर उसके किसी एक तत्त्व को ही प्रधानता व प्राथमिकता देकर प्रयोग होने लगता है। उदाहरण के लिये पुलिस के लिये ''लाल पगडी'' का प्रयोग। पुलिस केवल लाल पगडी ही नहीं पहनती फिर भो पुलिस के लिये लाल पगडी का प्रयोग किया जाता है।

19.12.15 एक शब्द के भिन्न भिन्न रूपों का विभिन्न अर्थों में प्रयोग –

किसी शब्द के तत्सम एवं तद्भव रूपों के अर्थ बदल जाता है जैसे साधु – साहु, श्रेष्ठ – सेठ, तिलक – टिकली, भद्र – भद्रा

19.12.16 व्याकरणिक कारण –

व्याकरणिक कारण अर्थात उपसर्ग, प्रत्यय, लिंग आदि के कारण भो अर्थ परिवर्तन होता है। एक ही धातु से निष्पन्न विभिन्न शब्दों में भिन्न भिन्न प्रत्ययों के कारण विभिन्न अर्थों के बाधक बन जाते हैं। जैसे ''हार'' शब्द विभिन्न उपसर्गों के योग से विभिन्न अर्थ का वाचक हो जाता है। जैसे – प्रहार, संहार, विहार, उपहार आदि

19.12.17 समास –

व्याकरणिक कारणों के साथ साथ समास के कारण भो अर्थ परिवर्तन होता है। जैसे गृहपति – पतिगृह, कविराज – राजकवि, आदि। बहुब्रीही समास के कारण नीलाम्बर, पीताम्बर आदि शब्द कृष्ण के लिये प्रयुक्त होते हैं।

19.12.18 शब्दों का अधिक प्रयोग –

शब्दों का बहुत ज्यादा प्रयोग करने से उसका अर्थ घिस जाता है। अधिक प्रयोग के कारण उनका मूल अर्थ नहीं रहता। जैसे – ''बहुत'' शब्द के स्थान पर अत्यन्त, अतिशय का प्रयोग किया जाता है। ''अधिक'' शब्द के बदले अत्यधिक, अधिकाधिक शब्दों का प्रयोग होने लगा।

19.12.19 साधारण व्यवहार में आने वाले शब्द –

कई बार दैनिक जीवन में प्रयोग होने वाले शब्दों का अर्थ भो बदल जाता है। जैसे – माली कलम शब्द को दूसरे अर्थों में लेता है तथा बच्चे कलम शब्द का प्रयोग भिन्न अर्थ में करते हैं। पुलिस की बन्दूक की गोली, फिनाइल की गोली, दवाई की गोली, जहर की गोली, अफीम की गोली, बच्चो की मिठाई की गोली ये सभो भिन्न–भिन्न अर्थों की धोतक हैं। इस प्रकार हम देखते है कि दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाले शब्द प्रसंगानुसार अपना अर्थ बदल लेते हैं।

19.12.20 दूसरी भाषा के शब्दों को अपनी भाषा में लेना –

प्रत्येक भाषा दूसरी भाषा से शब्द ग्रहण करके स्वंय को समृद्ध बनाती है। मूल शब्द को लेकर उसका अर्थ बदल लेते हैं। जैसे – फारसी में मूर्ग का अर्थ पक्षी से है। भारतीय बोलियों में मूर्ग का अर्थ पक्षी न रहकर पक्षी विशेष है। दरिया शब्द इरानी में नदी कों, गुजराजी व मराठी में दरिया शब्द नदी व समुद्र दोनो के लिये प्रयुक्त होता है। भाषा में पिल्ला शब्द का प्रयोग आदमी के बच्चे के लिये किया परन्तु भारत में घृणा व नफरत के कारण पिल्ला कुत्ते के बच्चे को कहते हैं। उसी तरह वाटिका सस्कृत में बाग को कहते हैं और हिन्दी में बगीचें व बंगले के लिये प्रयुक्त होता है।

19.12.21 व्यक्तिगत योग्यता –

दो व्यक्तियों की व्यक्तिगत योग्यता कभो एक जैसी नही रहती। यही कारण है कि एक व्यक्ति जिस शब्द कों ग्रहण करता है वैसा दूसरा उसे ग्रहण नही करता। जैसे एक दार्शनिक ईश्वर का अर्थ कुछ ओर लेता है तथा भक्त कुछ अन्य। इसी प्रकार शून्य शब्द का प्रयोग दार्शनिक, निगुणोपाशक, वैज्ञानिक तथा गणितज्ञ अलग अलग ढंग से लेते हैं। ब्रहा शब्द को साधारण व्यक्ति भगवान के अर्थ में योगी, साक्षात्कर के अर्थ में तथा ग्रामीण भ्त के अर्थ में ग्रहण करता है।

19.12.22 सादृश्य –

सादृश्य के कारण भो कभो–कभो अर्थ परिवर्तन हो जाता है। जैसे ''प्रश्रय'' शब्द का संस्कृत में अर्थ था विनय, नम्रता तथा शिष्टता ''आश्रय'' शब्द इससे मिलता जुलता होने के कारण ''प्रश्रय'' शब्द का प्रयोग ''आश्रय'' या ''सहारा'' अर्थ में होने लगा। इसी प्रकार उत्क्रांति जिसका मूल अर्थ है ''मृत्यु'' या ''उछाल लेकिन अब क्रांति के अर्थ में इसका प्रयोग होने लगा। ''गोस्वामी'' शब्द के इसी कारण अनेक अर्थ मिलते हैं। जैसे – गायों के स्वामी, इन्द्रियो का स्वामी, ईश्वर एंव ब्राह्मणों के एक वग का वाचक बन गया है।

19.12.23 पुनरावृत्ति –

शब्दों की पुनरावृत्ति भो अर्थ परिवर्तन का कारण बनती है। जैसे 'अचल'' शब्द को हम लेते हैं जिसका अर्थ है पर्वत। फिर भो हम विन्ध्याचल पर्वत, हिमालय पर्वत, मलयगिरि पर्वत जिसमें पहले से ही अचल व गिरि शब्द है फिर भो इसकी पुनरावृति हुई है तथा पुनरावृति होने के बाद भो विन्ध्य पर्वत आदि आशय लिया जाता है।

19.12.24 भाषा में शब्द कोशो की रचना –

इससे भो शब्दों के अर्थ बदलते हैं। शब्दार्थ की अनिश्चतता में हमने पढा कि जिन शब्दों के अर्थ निश्चित नहीं होते और एक जैसा अर्थ प्रतीत होता है उसे हम पर्यायवाची मान लेते हैं। इसी से मिलता जुलता कारण यह है जिसे हमने भाषा में शब्द कोषों की रचना नाम दिया है। किसी भो भाषा में कोई भो शब्द किसी दूसरे शब्द का पर्याय नही होता फिर भो शब्द कोषों में प्रायः एक शब्द के अनेक पर्याय दिये जाते हैं। लेकिन उनमें इतना सूक्ष्म अंतर होता है कि पंडित व्यक्ति भो उसे बताने में असमर्थ रहता है। इस प्रकार शब्द का मूल अर्थ पता न होने के कारण शब्दों के अर्थ में अनिश्चय की स्थिति बनी रहती है। ऐसी स्थिति में उपयुक्त शब्द के स्थान पर अनुपयुक्त शब्द प्रचलित हो जाता है।

19.12.25 संक्षेपीकरण –

इस कारण से भो शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं। प्रारम्भ में ''हस्तिन'' का अर्थ था हाथ या सूंड वाला। इसके साथ ''मृग'' शब्द जोडकर ''हाथी'' अर्थ किया गया। बाद में संक्षेपीकरण द्वारा ''हस्तिन'' का अर्थ हाथी लेना प्रचलित हो गया।

19.12.26 स्नेह, प्रेम के आधिक्य के कारण –

प्रेमवश या भाव प्रवणता के कारण भो अर्थ परिवर्तन हो जाता है। वात्सल्य के कारण कई बार पिता बेटे को गधा, बदमाश आदि कह देते हैं। फलस्वरूप शब्दार्थ बदल जाता है।

19.12.27 राष्ट्र या जाति के प्रति सामान्य भाव –

इस कारण भो शब्दों के अर्थ में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जाता है। ईरानियों के देवता ''अहुरमंद'' में अहुर ''असुर'' का अर्थ है जिसे द्वेष के कारण आर्यों ने ''राक्षस'' अर्थ किया। जबकि इसका मूल अर्थ था प्राणवान अर्थात देवता। इसी प्रकार ईरानियों ने भो ''देव'' शब्द का अर्थ स्वंय की भाषा में ''राक्षस'' कर लिया। इसी प्रकार ''हिन्दू'' का मूल अर्थ है सिन्धु देशवासी है। किन्तु मुसलमानों ने द्वेष भाव के कारण प्रायः हिन्दू का अर्थ गुलाम के रूप मे लिया तथा हिन्दू लोगो ने ''मुसलमान'' का अर्थ अच्छे भाव से नही लेन लगे, जबकि मुसलमान का अर्थ है –''इस्लाम धर्मावलम्बी'' इस प्रकार हम देखते है कि राष्ट्र या जाति के प्रति सामान्य मनोभाव अर्थ परिवर्तन करते है।

19.12.28 लाक्षणिक प्रयोग या अलंकारों का प्रयोग –

प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा रहती है कि जब वह भाषण दे या कुछ बोले उस समय अपनी अभिव्यक्ति को सुंदर और प्रभावशाली बनाए। इसके लियें वह लाक्षणिक प्रयोग और अलंकारों का प्रयोग करता है। इससे शब्दार्थ में परिवर्तन आ जाता है। कई बार व्यक्ति अपने भावों को स्पष्ट करने के लिये निर्जीव वस्तुओं या अमूर्त पदार्थों का प्रयोग करता है। कठोर हृदय वाले को ''पत्थर का सद्श'' या ''पाषाण सदृश'' कहते है। बहादुर व वीर व्यक्ति को शेर, कायर को गीदड, खुशामदी या चापलूस को कुत्ता, मूर्ख को गधा, बुद्धिहीन को बैल आदि लाक्षणिक प्रयोग के उदाहरण हम देखते हैं। जिसका कुछ निश्चय न हो उसे ''बिना पदी का लोटा'', दुर्बल व्यक्ति को ''हाथी'' निखट्टू व कामचोंर को ''कमाऊ पूत'' चरित्रहीन स्त्री कों ''सती सावित्री'' लडाई कराने वाले को ''नारद'' कह देते हैं। इसी प्रकार टेढा आदमी, मीठी बात, घडे का मुँह, दीवार के कान, घडी के हाथ इसी तरह के उदाहरण है। जलना सामान्यतः दाह को कहते हैं, परन्तु आलंकारिक रूप में विरह की आग, हृदय की जलन, लहू के घूट पीना, छाती पर साँप लोटना आदि आलंकारिक रूप है।

19.12.29 भावात्मक बल प्रयोग –

भावात्मक बल प्रयोग के कारण भो अर्थ परिवर्तित हो जाता है। ''भोषण सुन्दर'' ''भयकर चतुर'' ''प्रचण्ड भ्ख'' में भोषण, प्रचण्ड तथा भयकर अतिशयता को व्यक्त करता है।

19.12.30 नवीन वस्तुओं का निर्माण तथा प्रयोग व प्रचलन –

जब नवीन वस्तुएँ बनती है तो उन वस्तुओं के नाम जिन सामग्री से वे बनती है उसी के आधार पर उस वस्तु का नामान्तरण हो जाता है। जैसे – लेखन कार्य पहले पक्षियों के पंखो की डंडियों से होता था लेटिन में पंखों का पिन्ना कहा जाता था। उसी से ''पेन''' शब्द का विकास हुआ। वर्तमान में लोहे की कलम को भो पेन कहा जाने लगा।

कई बार नवीन वस्तुओं के नाम उसकें निर्माण में प्रयुक्त सामग्री पर ही आधारित नही होते बल्कि उसके बनानें की प्रक्रिया पर भो आधारित होते है। जैसे – किताब अर्थात पुस्तकें गूंथकर बनाई जाती थी। अतः इस आधार पर उसका नाम ''ग्रन्थ''' पड गया। हम ग्रन्थ शब्द का अर्थ पुस्तक से ही लेते हैं।

19.13 पारिभाषिक शब्दावली

1 **'ध्वनि** – मनुष्य के विकल्पहीन नियत स्थान और निश्चित प्रयत्न द्वारा उत्पादित औरश्रोत्रेन्द्रिय द्वारा अविकल्प रूप से गृहीत शब्द लहरी है।''

2 **ध्वनिग्राम**– ध्वनिग्राम और संध्वनि शब्दों का प्रयोग क्रमशः फोनेम (Phoneme) अलोफोन। (Allophone) के लिए किया जाता है। हिन्दी में ध्वनि–ग्राम के लिए ध्वनि–श्रेणी, स्वन–ग्राम, स्वनिम, ध्वनितत्व, वर्ण आदि शब्दों का भो प्रयोग होता है और संध्वनि के लिए ध्वनयंग, संस्वन आदि की भो।

3 **संध्वनि** या प्रयत्न लाघव

3 **ध्वनि परिवर्तन** – भाषा के प्रत्येक अवयव ध्वनि, अर्थ, वाक्य–विन्यास आदि में परिवर्तन बराबर होता है।

4 **समास** – पदों का एक पद होना समास कहलाता है।

19.14 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 ध्वनि स्वरूप, ध्वनि की परिभाषा के बारे में बताइयें ?

2 भाषा ध्वनि, ध्वनिग्राम तथा संध्वनि किसे कहते हैं ?

3 ध्वनि परिवर्तन क्या है ? उसके कारणों पर विस्तृत प्रकाश डालियें।

4 अर्थ का स्वरूप एंव अर्थ का क्या महत्त्व है ? समझाइयें।

5 अर्थ परिवर्तन के कारणो को स्पष्ट कीजियें ?

19.15 सारांश

अर्थ परिवर्तन के उपर्युक्त वर्णित कारणों के अतिरिक्त भो अन्य अनेक कारण उत्तरदायी हैं। क्योंकि अभो तक अर्थ परिवर्तन के कारणों का पूर्ण अध्ययन बाकी है। अर्थ परिवर्तन का अर्थ एक सुनिश्चित कारण नही हैं। अर्थ परिवर्तन के आंतरिक व बाह्य भोतिक तथा मानसिक अनेक कारण सम्मिलित हैं।

19.16 संदभ ग्रंथ सूची

1. तुलनात्मक भाषा विज्ञान– डॉ. पाण्डुरंग दामोदर गुणे, मोतीलाल बनारसीदास, 1963.
2. संस्कृत भाषाविज्ञान– राजकिशोर सिंह, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा,1986.
3. Introduction to Sanskrit Philology – बटुकृष्णघोष, मुन्शीराम मनोहरलाल,नई दिल्ली,1943.
4. भाषाविज्ञान,भोलानाथ तिवारी,किताब महल,इलाहाबाद,1951.
5. भाषाविज्ञान एवं भाषा शास्त्र, डॉ. कपिल देव द्विवेदी,विश्वविद्यालय प्रकाशन,वाराणसी, 2002.

इकाई—20

ध्वनि नियम एवं ध्वनियों का विकास

इकाई की रूपरेखा –

20.0 उद्देश्य

एम.ए.पूर्वार्द्ध के प्रथम प्रश्न पत्र की उन्नीसवीं इकाई को ''ध्वनि नियम एवं ध्वनियों के विकास'' विषय प्रस्तुत किया गया है। इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप –

- ध्वनि नियम की पृष्ठभ्मि बता सकेंगे,
- प्रमुख ध्वनि नियमों (ग्रिम, ग्रासमैन, बर्नर, सादृश्य, व तालव्य भाव नियम) के विषय में विस्तार से जान सकेंगे।
- ध्वनियों के विकास को जानते हुए उसके कारणों को उदाहरण सहित बता सकेंगे।

20.1 प्रस्तावना

भाषा के विभिन्न अवयवों में उपस्थित होने वाले परिवर्तन के रूप में भाषा का निरन्तर विकास होता है। परिवर्तन किसी भो भाषा की जीवित सत्ता का प्रमाण है। वस्तुतः जीवित भाषा का लक्षण ही यह है कि उसमें गतिशीलता बनी रहे जो उसके विकास का चिन्ह है। भाषा के सभो अंगों ध्वनि, पद, वाक्य या अर्थ में परिवर्तन होता रहता है। इस परिवर्तन का

प्रारम्भ ध्वनि से ही होता है। इसीलिए विद्वानों ने समय–समय पर ध्वनि नियम निर्धारित किये हैं।

प्रस्तुत इकाई में आप ध्वनि नियमों, ध्वनियों के विकास को विस्तारपूर्वक पढ़ सकेंगे। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप भाषा विज्ञान के महत्त्वपूर्ण विषय ध्वनि विज्ञान से सम्बन्धित ध्वनि नियम की पृष्ठभूमि, परिभाषा, आवश्यकता, ग्रिम नियम, ग्रासमैन नियम इत्यादि प्रमुख ध्वनि नियम का विस्तार पूर्वक अध्ययन करेंगे। साथ ही ध्वनियों के विकास के विषय में जानकारी पा सकेंगे।

20.2 ध्वनि नियम पृष्ठभूमि

''भाषा विज्ञान के नियम अन्य प्राकृतिक नियमों की तरह शाश्वत न होकर काल सापेक्ष होते हैं। यदि विशेष परिस्थितियो में पड़कर कोई क्रिया समय और स्थान की सीमा तोड़कर सर्वदा घटित हुआ करती है तो उसे प्रायः नियम की संज्ञा देते हैं'' (भोलानाथ तिवारी)।

ध्वनि नियम काल और स्थान से सम्बद्व होते हैं। इसीलिए कुछ भाषा विज्ञानविद् ध्वनि नियम को ध्वनि प्रवृत्ति कहते हैं। किन्तु अतीत काल के सम्बन्ध में ध्वनि प्रवृत्ति नहीं हो सकती, ध्वनि नियम ही होता है। भिन्न –भिन्न भाषाओ में एक ही काल में अथवा एक ही भाषा में विभिन्न कालों में होने वाले ध्वनि विकारों की तुलना और इतिहास की प्रक्रिया से अध्ययन करके कुछ निश्चित नियम निष्कर्ष के रूप में ही ज्ञात हो जाते हैं। इस प्रकार ध्वनि नियम का सम्बन्ध अतीत काल से होता है किन्तु यदि वही परिस्थितियां उसी भाषा में वैसे ही अवसर पर पुनः प्रस्तुत हों तो उसका परिणाम पूर्वानुसार ही होगा, यह ध्वनि नियम का सिद्धान्त है।

20.3 ध्वनि नियम – परिभाषा

भाषा परिवर्तनशील है। उसके सभो अंगो – ध्वनि, पद, वाक्य या अर्थ में परिवर्तन होता रहता है। भाषा में परिवर्तन का प्रारम्भ प्रमुख रूप से ध्वनि से ही होता है।

''भाषा के परिवर्तन में एक बड़ा कारण शब्दों में वर्ण विकार सम्बन्धी परिवर्तन (अथवा ध्वनि परिवर्तन) Phonetic change है। इसी कारण एक मूल शब्द कालान्तर में दूसरे रूप को धारण कर लेता है। और भिन्न भिन्न सम्बन्धी भाषाओं में भिन्न भिन्न रूपों में दिखाई देता है।'' डा. मंगल देव शास्त्री

ध्वनि परिवर्तन की प्रवृति कुछ ऐसा निश्चित रूप रखती है कि इसे ध्वनि नियम कहा जाता है। किसी विशिष्ट काल और दशाओ में हुए नियमित परिवर्तन या विकार या विकास को उस भाषा का ध्वनि नियम'' कहते हैं। इस प्रकार ध्वनि–नियम काल और स्थान से सम्बद्व होने के कारण सीमित हैं। ध्वनियों में विकार या परिवर्तन देखकर ही नियम निर्धारित किए जाते हैं। प्रसिद्व भाषाविज्ञानविद टकर् Tucker ने ध्वनि नियम की परिभाषा इस प्रकार की है'' किसी विशिष्ट भाषा की, कुछ विशिष्ट ध्वनियो में, किसी विशिष्ट काल और कुछ विशिष्ट दशाओ में हुए नियमित परिवर्तन को उस भाषा का ध्वनि नियम कहते हैं। डॉ. भोलानाथ तिवारी ने ध्वनि नियम की इस परिभाषा के चार अंगों का सोदाहरण विवेचन इन शब्दों में किया है–

(1) ध्वनि नियम किसी भाषा विशेष का होता है। एक भाषा के ध्वनि नियम को दूसरी भाषा पर लागू नहीं कर सकते। अंगजी के अधिकतर शब्दो के अन्तिम आर (R) का उच्चारण नहीं किया जाता। अर्थात फादर (Father) का उच्चारण फादअ होता है, पर हिन्दी में इसे लागू करके हम अम्बर को अम्बअ नहीं कह सकते।

(2) एक भाषा की सभो ध्वनियों पर यह नियम न लागू होकर कुछ विशिष्ट ध्वनियों या ध्वनि वर्गों पर लागू होता है। जैसे उपर्युक्त उदाहरण में आर (R) को अनुच्चरित होते देखकर हम अन्तिम एन (N) को भो अनुच्चरित करके मैन (Man) को मैअ नहीं कह सकते और न गन (Gun) को गअ ही कह सकते हैं।

(3) ध्वनि परिवर्तन का ही एक विशिष्ट काम होता है। इस अन्तिम आर के अनुच्चरित होने का नियम प्रायः नवीन है। इसे अंग्रेजी के अत्यधिक प्राचीनकाल पर लागू नहीं किया जा सकता है।

(4) किसी विशिष्ट भाषा के विशिष्ट काल में कोई विशिष्ट ध्वनि भो यों ही परिवर्तित नहीं हो सकती है। उनके लिए विशिष्ट दशा या परिवर्तन की आवश्यकता पड़ती है। उपर्युक्त उदाहरण में ही प्रायः ऐसा नियम है कि वाक्य में किसी शब्द के अन्त में आर (R) हो और उसके पश्चात् आने वाला शब्द किसी व्यंजन से आरम्भ होता हो, तब तो यह अनुच्चरित होने का नियम लागू होगा और यदि वह शब्द के आरम्भ में होता हो तो न होगा। इस प्रकार ध्वनि नियम परिस्थितियो में प्रायः बंधा रहता है।

20.4 प्राकृतिक नियम तथा ध्वनि नियम

डॉ. भोलानाथ तिवारी ने प्राकृतिक नियम और ध्वनि नियम में तीन अन्तर माने हैं। (1) प्राकृतिक नियम किसी काल विशेष की अपेक्षा नहीं रखते, पर भाषा के ध्वनि नियम में यह बात नहीं है। भारतीय आर्य भाषा के इतिहास में प्राचीन काल से मध्य में आने में जो परिवर्तन घटित हुए हैं मध्य से आधुनिक काल में आने में नहीं हुए हैं। भविष्य के लिए भो हम निश्चित नहीं है कि ये परिवर्तन घटित होने या नहीं। (2) प्राकृतिक नियम काल की भांति ही दशा या स्थान की भो अपेक्षा नहीं रखते। न्यूटन का नियम प्रायः सर्वत्र लागू होता है, पर ध्वनि नियम की इस सम्बन्ध में सीमाएं हैं जिनको कि वह लांघ नहीं सकता। (3) प्राकृतिक नियम अन्धे की भांति काम करते हैं। और कोई अपवाद नहीं छोड़ते, पर इसके विरूद्ध ध्वनि नियम अपवाद छोड़ते चलते हैं। संस्कृत 'नृत्य का नाच' हो गया, किन्तु 'भत्य का विकास' भाच नहीं हुआ।

20.5 ध्वनि नियम और ध्वनि प्रवृति –

प्रत्येक ध्वनि नियम अभो प्रारम्भिक अवस्था में ध्वनि प्रवृत्त होता है। अपने घटित होते रहने के काल में वह ध्वनि प्रवृत्त रहता है और पूर्ण हो जाने पर ध्वनि नियम कहलाता है। इसीलिए यह कहा जाता है कि ध्वनि नियम का सम्बन्ध भाषा की ध्वनियों के वर्तमान या भविष्य काल के परिवर्तन से न होकर उसके अतीत कालीन परिवर्तन से होता है। कुछ विद्वानो ने प्राकृतिक नियमों की अपेक्षा ध्वनि नियमो में स्थिरता न पाकर ध्वनि नियम को ध्वनि प्रवृत्ति या ध्वनि फार्मूला कहा है किन्तु यह मत उचित नहीं है।

20.6 ध्वनि नियम के अपवाद –

प्रो. देवेन्द्रनाथ शर्मा ने ध्वनि नियम के मुख्य 2 अपवाद माने हैं –

(1) दूसरी भाषा से ग्रहीत शब्दों पर किसी भाषा के ध्वनि नियम लागू नहीं होते। यदि होते हैं तो सभो जब वे शब्द उस ध्वनि नियम के प्रचलित होने के पहले ग्रहीत हुए हो। उदाहरणार्थ, हिन्दी में जो शब्द तत्सम रूप में चल रहे हैं, उन पर लागू प्राकृत या अपभश के ध्वनि नियम नहीं घटित किये जा सकते। जैसे तत्सम 'क्षेत्र' शब्द ध्वनि– परिवर्तन के उन नियमों से अप्रभावित हैं जिनमें वह 'खेत' बना।

(2) ध्वनि नियम का दूसरा अपवाद या विरोधी कारण है सादृश्य। यह आधार बाह्य होता है अतः भाषा को अन्तर्निहित और नैसर्गिक विशेषताओं से उसका कोई सम्बन्ध नहीं होता है। Should और Would के सादृश्य पर Could में भो का प्रयोग होने लगा, यद्यपि Can में उसका अभाव है, Could का L तो सर्वथा सादृश्यभत् है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि यदि ऐसे आधारों पर कोई नियम बनाने का प्रयास किया जाये तो वह भान्त और अग्राह्य होगा।

20.7 ध्वनि नियम का स्वरूप

श्री राममूर्ति मेहरोत्रा ने ध्वनि नियम के स्वरूप का विवेचन करते हुए लिखा है कि 'प्रत्येक ध्वनि नियम अपनी प्रारम्भिक अवस्था में एक प्रवृत्ति होता है'। कभो–कभो तो किसी भाषा विशेष में किसी कारणवश कोई प्रवृत्ति चल निकलती है जिसके अनुसार उसमें भिन्न भिन्न कालों में ध्वनि परिवर्तन होते रहते हैं और कभो किसी काल विशेष में कोई प्रवृत्ति चल पड़ती है जिसके अनुसार भिन्न भिन्न भाषाओ में ध्वनि विकार होते हैं। अनेक प्रवृत्तियां तो परिवर्तित अथवा समाप्त हो जाती हैं, परन्तु जो शेष रह जाती हैं,वे अपना कार्य पूर्ण करने पर, चाहे उनका कार्य क्षेत्र कितना ही संकुचित क्यों न हो, सिद्धान्त का रूप धारण कर लेती हैं और ध्वनि नियम कहलाने लगती है। अतएव प्रत्येक ध्वनि नियम का कार्य क्षेत्र परिमित और काल नियमित है। जिस प्रकार प्राकृतिक नियम निरपवाद होते हैं उसी प्रकार ध्वनि नियम में भो अपवाद नहीं होते। यदि किसी ध्वनि विकार को उसकी भाषा अथवा काल सम्बन्धी ध्वनि कि नियम द्वारा व्याख्या नहीं की जा सकती, तो इसके यह मानी नहीं है कि वह उस नियम का अपवाद है क्योंकि ऐसे ध्वनि विकार प्रायः उपमान, विभाषा मिश्रण, मस्तिष्क की स्वच्छन्दता, ग्राम्य तथा प्राचीन मृत शब्द मिश्रण आदि बाह्य कारणों द्वारा सिद्ध किए जा सकते हैं। वास्तव में बात यह है कि ध्वनि नियमों का सम्बन्ध मुख जन्य तथा श्रुति जन्य विकारों से अर्थात् आन्तरिक कारणों से है, बाह्य से नहीं। परन्तु भाषा के विकास में बाह्य कारणों का विशेष हाथ रहता है, अतः ध्वनि नियमों पर भो बाह्य प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। यदि कोई भाषा बाह्य कारणों से पृथक रहे अथवा हम उसके बाह्य प्रभाव को अलग कर दे तो शुद्ध अथवा निरपवाद ध्वनि नियम बन सकता है, तब जो नियम बनेगा वह अन्य वैज्ञानिक नियमों की भांति अकाट्य होगा।

20.8 प्रमुख ध्वनि नियम

20.8.1 ग्रिम नियम

इस नियम की ओर संकेत करने वाले दो व्यक्ति इसे एवं डैनिश विद्वान् हैं। पर इन लोगों ने मात्र संकेत मात्र किया था। इसकी पूरी विवेचना करने का श्रेय महान् अध्येता,जर्मन भाषा के महान पण्डित याकोव ग्रिम हैं। आपने 1219 ई0 में जर्मन भाषा का एक व्याकरण प्रस्तुत किया। सन 1322 ई0 में उसके दूसरे संस्करण में इस नियम का विवेचन किया। इनके ही नाम पर इस नियम का नाम '' ग्रिम नियम '' (Grim law) है। इस नियम का सम्बन्ध भारोपीय स्पर्शों (घ, ध्, भ, द्, व्, क्, त, प्) से है, जो जर्मन भाषा में परिवर्तित हो गए हैं। इसे जर्मन भाषा का वर्ण परिवर्तन कहते हैं। जर्मन भाषा का परिवर्तन दो बार हुआ। प्रथम वर्ण परिवर्तन ईसा से कई सदी पूर्व हुआ तथा द्वितीय वर्ण परिवर्तन उत्तरी जर्मन लोगों से ऐंग्लो सैक्सन लोगों के पृथक होने के बाद लगभग सातवीं सदी में हुआ।

प्रथम वर्ण परिवर्तन – इस प्रथम वर्ण परिवर्तन में मूल भारोपीय भाषा के कुछ स्पर्श परिवर्तित हो गए थे, जो इस प्रकार हैं –

(क)	मूल भारोपीय भाषा के घोष महाप्राण स्पर्श घ्, ध्, भ	जर्मन में घोष अल्पप्राण ग्, द्, ब् हो गए
(ख)	मूल भारोपीय भाषा के घोष अल्पप्राण ग्, द्, ब्	जर्मन में अघोष अल्पप्राण क्, त्, प् हो गए
(ग)	मूल भाारोपीय भाषा के अघोष अल्प प्राण क्, त्, प्	अघोष महाप्राण ख (वह) प्, फ

शब्दों के आधार पर ग्रिम नियम को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है –

मूल भारोपीय भाषा की प्रतिनिधि संस्कृत भाषा	परिवर्तनशील ध्वनि	जर्मनी की प्रतिनिधि भाषा, अंग्रेजी भाषा	परिवर्तित ध्वनि
(क) घन (मूल भारोपीय पस ध् गूज (goose) ग से संस्कृत हंस)			
विधवा, घूल	ध्	विडो (Widow) डस्ट Dust	द्, ड
भातृ	भ	ब्रदर (Brother)	
(ख)गो, योग	ग्	काउ (Cow) योक Yoke	क
द्वौ, दश	टू	(Two) टैन Ten	त (ट्)
(भोलानाथ तिवारी के अनुसार संस्कृत में इसका कोई उदाहरण नहीं मिलेगा (स्तवन) परंतु डॉ. कर्णसिंह ने अपनी पुस्तक में इसका संस्कृत से ही निम्न उदाहरण दिया है	ब	स्लिप (Slip)	
बाधन्		पेन (Pain)	
(ग)	कः	क् हू Who	ख (ह्)
दंत, तनु, त्रि	त्	टूथ (Tooth) थिन (Thin) थ्री (Three)	प
पितृ, पाद	प्	फादर (Father) फुट (Foot)	फ

द्वितीय वर्ण परिवर्तन – प्रथम वर्ण परिवर्तन में मूल भाषा से जर्मन भाषा भिन्न हुई थी पर इस द्वितीय वर्ण परिवर्तन में जर्मन भाषा के ही रूपों उच्च जर्मन (Higher Jerman) निम्न जर्मन (Low Jerman) में अन्तर पड़ा। इस परिवर्तन के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि निम्न जर्मन वाले (अंग्रेज आदि) विकास के पूर्व ही वहां से हट गए, अतः उनमें कोई अन्तर नहीं पड़ा। पर उच्च जर्मन वाले वहीं थे, अतः परिवर्तन का प्रभाव उन पर पड़ा। फलतः उच्च एवं निम्न जर्मन की कुछ जातियाँ भिन्न हो गई जो इस प्रकार से हैं –

निम्न जर्मन (अंग्रेजी)	उच्च जर्मन
ग् द् ब्	क, त्, प्
ख क त्,प्	ख(ह) थ् (त्स या, स्स) फ्
ख्, थ्, फ्	

शब्दों के आधार पर यह इस प्रकार हैं –

निम्न जर्मन (अंग्रेजी)	परिवर्तनशील परिवर्तित ध्वनि	उच्च	जर्मन
गिरा	ग्	कैस्ट्रे (Kestre)	क
डॉटर (Daughter) (ट)	द (ड)	टॉख्टर (Tacheta)	त्
बुक ठववा	क	बख (Buch)	ख
वाटर (Water) (स् स)	व	बारसेर (Wasser)	बय
डीप (Deep)	प्	टीफ (Tief)	फ्

थ्री Three	थ् द(ड)	ड्राय	Drei
थीफ Thief	फ	डीव Dieb	ब्

प्रथम एवं द्वितीय वर्ण परिवर्तन के आधार पर निम्न ग्रिम महोदय ने जो तालिका बनाई थी वह इस प्रकार है –

मूल भारोपीय भाषा	निम्न जर्मन	उच्च जर्मन
घ्, ध्, भ –	ग्, द, ब् क्, त्, प्	
ग्, द्, ब् –	क्, त्, प्	ख्, ह्, थ्, फ्
क्, त्, प् –	ख् (ह्) थ् प्	ग्, द्, ब्
	(प्रथम वर्ण परिवर्तन)	(द्वितीय वर्ण परिवर्तन)

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि ग्रिम नियम बहुत सुलझा हुआ है और विद्वानों ने इसे आदर भो दिया है, किन्तु दोनो परिवर्तनों में ग्रिम महोदय ने जो समानता दिखाई है वह साधारण रूप में प्राप्य नहीं है। प्रथम परिवर्तन अपवादों के होते हुए भो ठीक है, किन्तु द्वितीय के उदाहरण ठीक इस रूप में नहीं मिलते। इसके अपवाद भो बहुत मिलते हैं। सुप्रसिद्व भाषा वैज्ञानिक स्कर ने प्रथम और द्वितीय वर्ण परिवर्तन का समन्वित रूप इस प्रकार प्रस्तुत किया –

मूल भाषा	निम्न जमंन	उच्च जर्मन
gh, dh , bh	g , d , f	x , t , x
g , d , b	k , t , p	x , z , ss , s, g
k , t, p	kh(t) th, f	x , d, st, x

स्वयं ग्रिम ने भो अपने नियम के कुछ अपवादों का उप नियमों के रूप में वर्णन किया है –

लैटिन	गाथिक	उच्च जर्मन
Facis	Fesks	Fisch
Ist	ist	ist
Spicio		Spehon

इसी प्रकार त् ' के पूर्व क् या प् होने पर भो परिवर्तन नहीं होता –

लैटिन	संस्कृत उच्च जर्मन	गाथिक
Okto	अष्टौ acht	ahtau
Neptis	नप्ता Nift	

20.8.2 ग्रासमान नियम (Grassmann's Law)

ग्रिम महोदय को स्वयं अपने नियम में कुछ अपवाद मिले थे। उनमें से कुछ अपवादों के लिए ग्रिम ने उप नियम बनाए। ऐसा होने पर भो अपवाद रह गए इन अपवादो के लिए ग्रासमान ने उप नियम बनाए। अतः इसे ग्रासमान नियम कहा गया।

ग्रिमनियम के अनुसार शब्दों में साधारणतया क्, त्, प् को ख, (ह) थ्, फ् होना चाहिए किन्तु 'ग्, द्, ब् मिलता है, जैसे –

मूल भाषा	अंग्रेजी
Kighho	go
,,	Dump

किन्तु ग्रिम नियम के अनुसार Kighho के स्थान पर kh या h ख h होकर kho या ho होना चाहिए किन्तु go होता है।

इसी प्रकार त् को थ् न होकर द् होकर Dump तथा त् को फ् न होकर b होकर Body होता है। इसे ध्यान म रखते हुए ग्रासमैन ने यह खोज निकाला कि भारोपीय मूल भाषा शब्द या
धातु के आदि और अन्त दोनों स्थानों पर महाप्राण हो तो संस्कृत, ग्रीक आदि में एक अन्य प्राण हो जाता है। इसी हेतु उपर्युक्त परिवर्तन ग्रीक भाषा में हुआ है।

इसीलिए संस्कृत में 'हु ' धातु का रूप हुतोति, हुहुतः, हुहन्ति न बनकर जुहोति, जुहुतः, जुहन्ति बनता है। इसी प्रकार 'धा' धातु से धाधामि न बनकर दधामि, भ धातु से भभार न बनकर बभार, ह्व धातु से ह्हार न बनकर जहार बनता है। इसी नियम का उल्लेख पाणिनि ने अपनीअष्टाध्यायी के 'अभ्यासे चर्च' नामक सूत्र में किया है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि भारोपीय मूल भाषा की दो अवस्थाएं रही होगी। प्रथम अवस्था में दो महाप्राण रहे होंगे तथा दूसरी अवस्था में नहीं। अतः अपवाद स्वरूप क्, त्, प् के स्थान पर ग्, द्, ब् मिलते हैं। प्राचीन काल में क्,त, प का पुराना रूप ख् (ह), थ्, फ् अर्थात भारोपीय घ्, ध्, भ, रहा होगा और घ्, ध्, भ से ग्, द्, ब् बना होगा जो पूर्णतः नियमानुकूल है।

20.8.3 बर्नर नियम (Verner's Law)

भाषा विज्ञान का सुप्रसिद्व ध्वनि नियम 'ग्रिम नियम' कहलाता है। उसके अपवादों का निराकरण ग्रासमान ने किया, अतः यह ग्रासमान नियम कहलाया। ग्रासमान के नियम में भो कुछ अपवाद शेष रह गए थे, जिनका निराकरण कार्ल बर्नर ' ने किया।

बर्नर ने यह निश्चित किया कि ग्रिम का नियम बलाघात पर आधारित था मूल भाषा के क्, त्, प् के पूर्व यदि बलाघात हो तो ग्रिम नियम के अनुसार परिवर्तन अर्थात् क्, त्, प् के स्थान पर ख, (ह) ध्, ष् हो जाएगा। परंतु यदि क्, त्, प् के बाद वाले स्वर परस्वराधात हो तो ग्रासमान की भांति ग्, द्, ब् हो जायेगा। जैसे –

संस्कृत	लैटिन अंग्रेजी	गाथिक
युवशरा (रा = क)	Junvencus Young	Juggs
सप्तम्	Centum Hundred	Hunda
मघन	Septem Seven	Sibun

ग्रिम महोदय ने यह भो संकेत दिया था कि स् के लिए स् ही मिलता है किन्तु कुछ उदाहरणों में स् के स्थान पर र् मिला। इसका भो कारण बर्नर ने स्वराघात बताया यदि स् के पूर्व स्वराघात हो तो स् ही रहेगा, किन्तु यदि बाद में हो तो ' र् ' हो जाएगा। बर्नर ने यह भो बतलाया कि यदि मूल भारोपीय क्, त्, प् के पूर्व स् मिला हो तो जैसे – स्क्, स्त्, क्य् (Sk, St, Sh) तो जर्मन में किसी प्रकार का अंतर नहीं पड़ता।

20.8.4 सादृश्य नियम –

जहाँ ग्रिम नियम से भिन्न प्रकार का ध्वनि परिवर्तन दृष्टिगोचर होता हो तो उस अपवाद का कारण 'सादृश्य' को मानना चाहिए। जैसे –

मूल भारोपीय भाषा की प्रतिनिधि संस्कृत भाषा		गाथिक (अंग्रेजी)
पिता	–	फादर (Father)
माता	–	मदर (Mother)

यहाँ त् से ठीक पहले स्वराघात (उदात्त स्वर) नहीं है, अतः त् का विकास गाथी (अंग्रेजी) में th थ् नहीं होना चाहिए, किन्तु

भाता	–	ब्रादर (Brother)

में त् के ठीक पहले उदात्त स्वर होने के कारण ' त् ' ध्वनि गाथी (अंग्रेजी) में th (प) में परिवर्तित हो गई। इसी प्रकार Brother के सादृश्य पर Father, Mother का विकास हुआ।

20.8.5 तालव्य भाव नियम (Platal Law)

इस नियम का आविष्कार 1875 के लगलग थॉम्सन V.Thomson जिन्हें रिमट, एशाम, वेगार, काबित्ज, देरोशोर आदि विद्वानों के द्वारा किया गया था।

इस नियम के अन्वेषण की पूर्व समस्त विद्वानों का यह अभिमत था कि संस्कृत की प्रायः सभो ध्वनियां मूल भारोपीय भाषा की मूल ध्वनियों के सबसे अधिक निकट है और ग्रीक तथा लैटिन अपेक्षाकृत बाद की विकसित भाषाएं हैं। ऐसी धारणा रखते हुए भो संस्कृत में जहां च्, ज् आदि वर्ण हैं वहां अन्य भाषाओं में क्, ग आदि क्यों हो गए, ऐसी शंका बनी रही। तालव्य नियम के अन्वेषण करने वालों ने नियम में बतलाया कि जिन संस्कृत शब्दों में 'अ' ग्रीक या लैटिन के (ओ) की तरह है उनके पूर्व क् या ग् ही पाया जाता है। जिन संस्कृत शब्दों में ' अ ' ग्रीक या लैटिन के E (ई) की तरह है तो उससे पूर्व कण्ठ से उच्चरित क या ग न मिलकर तालु को उच्चारित च् या ज् ही मिलते हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि तालव्य नियम के अनुसार मूल भारोपीय भाषा का तृतीय श्रेणी का कवर्ग संस्कृत में कहीं तो कवर्ग रहा, परन्तु पहले आने वाले स्वर के कारण कहीं– कहीं च वर्ग (तालव्य) में परिवर्तित हो गया डॉ मंगलदेव शास्त्री ने मूल भाषा के कंठ्य स्पर्शों के संस्कृत में तालव्यी भाव के उदाहरण इस प्रकार प्रस्तुत किये हैं –

भारोपीय मूल भाषा	ग्रीक संस्कृत	लैटिन
qe	te च	que
Penqe	pento पन्च	quingue
qid	ti चिद्	quid
Kukis	 शुचि	

20.9 (ध्वनियों का विकास)

प्रकृति सतत परिवर्तन शील है। परिवर्तन प्रकारान्तर से ही विकास है। किसी भो भाषा की ध्वनि में भो परिवर्तन (विकास) होता ही रहता है। इसी कारण भाषा सजीव एवं प्रगतिशील होती है। किसी भाषा को बोलने वाली जाति विशेष का भो एक अपना परिवेश होता है, जब परिवेश बदलता है तो मानव मन मस्तिष्क बदलते हैं, भाव धाराएं, चिन्तन

सरणियां और सूक्ष्म कल्पना छवियों में परिवर्तन होते हैं। अन्त में यह प्रभाव पड़ता है कि भाषा का मानसिक पक्ष बदलकर नये विकसित रूप में आ जाता है। कुछ विशिष्ट ध्वनि समूह में कल तक जो अर्थ था वह तो गाण हो जाता है तथा एक नवीन अर्थ प्रकट होता है।

20.10 ध्वनियों के विकास के कारण

(1) मुख सुख (प्रयत्न लाधव) यह ध्वनि परिवर्तन का प्रमुख कारण है। भाषण करते समय वक्ता सदा ही अपने मुख की सुविधानुसार भाषण किया करता है। वह चाहता है कि अल्प प्रयत्न से हो उसका आशय पूर्ण हो जाये। मुख सुख के कारण ही 'अन्धकार' जैसे बड़े शब्द के स्थान पर 'अंधेरा' शब्द प्रयुक्त होता है। इसी प्रकार 'शुक्ल दिवस – सुदि ' तथा ' वस्तु दिवस > बदि हो गया।

इसी मुख सुख के कारण अंग्रेजी में Night, talk,Walk आदि के शब्दो में gher आदि का उच्चारण नहीं होता है।

अन्य उदाहरण – सपत्नी–सौत, उपाध्याय–झा, बन्धोपाध्याय–बनर्जी, चट्टोपाध्याय–चटर्जी

(2) अनुकरण की अपूर्णता – भाषा अनुकरण द्वारा सीखी जाती है। किन्तु यह अनुकरण सदैव पूर्ण नहीं होता। अतः अपूर्ण अनुकरण परिवर्तन को जन्म देता है। जैसे कोई बालक सुनता है ' रूपया ' किन्तु अनुकरण से 'नुपया' अथवा 'लुपया' कहता है।

3) अज्ञान तथा अशिक्षा – अज्ञान तथा अशिक्षा के कारण भो ध्वनि परिवर्तन होता है। अनेक देशी, विदेशी शब्द ऐसे हैं,जिसके मौलिक स्वरूप से अपरिचित होने से ध्वनि परिवर्तन होता है।

जैसे– कम्पाउण्डर – कम्पोडर, प्रधान – परधान। एक्सप्रेस – इस्प्रेस। प्रैक्टिस – पराटीस इत्यादि

4) भामक व्युत्पत्ति– कभो–कभो भमपूर्ण व्युत्पत्ति से भो ध्वनि परिवर्तन हो जाता है। परन्तु इसका (भामक व्युत्पत्ति) मूल कारण अज्ञान तथा अशिक्षा ही है। अनेक व्यक्ति जब किसी अपरिचित शब्द के संसर्ग में आते हैं और उससे मिलता– जुलता शब्द यदि उन्हें पहले ही से ज्ञात होता है तो उस अपरिचित शब्द के स्थान पर सुपरिचित शब्द बोलने लगते हैं जैसे अरबी भाषा का शब्द 'इन्तकाल ' शब्द इसी कारण से हिन्दी में 'अन्त काल' के रूप में प्रयुक्त होता है।

(5) क्षिप्र भाषण– कभो–कभो अनजाने ही, विवशता या स्वभाववश भाषण में क्षिप्रता आ जाती है। क्षिप्र भाषण के कारण ध्वनियों का उच्चारण अस्पष्ट होता है तथा ध्वनि लोप, ध्वनि विपर्यय आदि परिवर्तन हो जाते हैं। जैसे –

भातृजाया – भोजाई

पंडितजो – पंडीजी

जबही – जभो

कबही – कभो

प्रोफेसर साहब – प्रोस्साब

मास्टर साहब – मास्साब

(6) भावातिरेक – जीवन में अनेक अवसरों पर व्यक्ति भावुक हो उठता है। भावातिरेक के कारण ही ध्वनियों में अनेक परिवर्तन हो जाते हैं।

जैसे – बेटी से बिटिया, वधू से वधूरी /बहुरिया, बेटा से बेटवा/बिटवा, रामू से रमुआ आदि

(7) **आत्म प्रदर्शन** – आत्म दर्शन की प्रवृत्ति के कारण अनेक वक्ता बनकर बोलने लगते हैं। इस प्रकार बोलने में ध्वनि परिवर्तन हो जाता है। जैसे कुछ अर्द्ध शिक्षित लोग अपने को अधिक शिक्षित प्रकट करने के कारण इच्छा को इक्षा, शाप को श्राप, अचार को आचार, सेवक को शेवक आलस्य को आलश्य आदि कहते हैं।

(8) **वाग्यन्त्र की विभिन्नता** – प्रत्येक व्यक्ति के बोलने का ढंग अलग– 2 होता है। कोई किसी ध्वनि को किसी प्रकार उच्चारित करता हे तो कोई किसी प्रकार से। यही भिन्नता ध्वनि परिवर्तन का रूप धारण कर लेती है।

जैसे– ऋ ' को लोग ' रि ' उच्चारित करते हैं, ' ष ' 'श ' को स कहते हैं।

(9) **भौगोलिक कारण** – भोगोलिक प्रभाव से भो ध्वनि परिवर्तन होता है। जैसे– उष्ण देश में रहने वाला व्यक्ति ठण्डे देश में मुख नहीं खोल सकता, इसी प्रकार उष्णदेशीय तथा शीतदेशीय ध्वनियों में अन्तर हो जाएगा।

(10) **ऐतिहासिक या काम का प्रभाव** – विशिष्ट काल की परिस्थितियां भो विशिष्ट होती हैं। प्राचीन काल से आज तक हम किन–किन धार्मिक, सामाजिक राजनीतिक परिस्थितियों से होकर गुजरे तथा किन किन कालों में हमारा सम्पर्क किस–किस जाति या देश के लोगों से हुआ, ये सब विषय इतिहास से सम्बन्धित हैं। इनके प्रभाव से भो ध्वनि परिवर्तन हो गया है। जैसे – वैदिक ध्वनियाँ क्रमशः पालि– प्राकृत – अपभश – हिन्दी में परिवर्तित हुई। विदेशियों से सम्पर्क से अनेक ध्वनि परिवर्तन हुए। जैसे हिन्दी में द्रविड़ों के सम्पर्क से मूर्धन्य ध्वनियाँ, मुगलों के सम्पर्क से क, ख, ग, ज, फ आदि ध्वनियाँ आ गई हैं।

(11) **सामाजिक प्रभाव** – भाषा सामाजिक सम्पत्ति है, अतः ध्वनियों पर सामाजिक परिस्थितियों का भो प्रभाव पड़ता है।

(12) **कलात्मक स्वच्छन्दता** – काव्यकला में प्रयुक्त कवि स्वातन्त्रय के कारण भो ध्वनि परिवर्तन होता है। पादपूर्ति, माधुर्य, लालित्य आदि के लिए कवि गण 'जहान' को 'जहाना', 'चरण' को 'चरन' 'काजल' को 'काजर', 'यशोदा' को 'जसोदा' आदि के रूप में प्रयुक्त करते हैं।

(13) **लिपि दोष** – जिस प्रकार भाषण के कारण ध्वनियों में अन्तर आता है, उसी प्रकार लिखने के कारण भो ध्वनि परिवर्तन होता है। क्योंकि दूसरी भाषा की ध्वनियों को लिखने के लिए अपनी भाषा की लगभग मिलती – जुलती ध्वनियों का प्रयोग होता है। जैसे – फारसी में 'कर्ण' को करण प्रकाश का 'परकाश' आदि लिखा जाता है। गुरूमुखी में 'स्टेशन' को 'सटेशन' हो गया है। रोमन लिपि के कारण राम, कृष्ण तथा मालवीय क्रमशः 'रामा' 'कृष्णा' 'मालवीया' हो गए हैं।

(14) **सादृश्य** – ध्वनि परिवर्तन का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कारण 'सादृश्य' है। किसी एक ध्वनि के आधार पर दूसरी ध्वनि में भो समानता लायी जाती है। जैसे – 'द्वादश' के सादृश्य पर एकदश 'का' एकादश हो गया है। 'स्वर्ग' के सादृश्य पर 'नरक' का 'नर्क' हो गया है

(15) **मात्रा, सुर, बलाघात** – मात्रा, सुर, बलाघात के कारण भो ध्वनि परिवर्तन हो जाता है। मात्रा – जब दो मात्राएं साथ–साथ आ जाती हैं तो प्रायः सरलीकरण के लिए एक मात्रा को हस्व कर देते हैं। फलतः ध्वनि परिवर्तन हो जाता है। जैसे बाजार का बजार, आकाश – अकाश।

सुर–सुर के कारण भो ध्वनि परिवर्तन होता है। जैसे कुष्ठ का कोढ़, बिल्व – बेल आदि बलाघात – बलाघात के कारण जिस ध्वनि के उच्चारण पर अधिक बल लगता है। उसके समीप की ध्वनि दुर्बल पड़ जाने से कालान्तर में लुप्त हो जाती है। यथा – आभ्यन्तर – भोतर

20.11 पारिभाषिक शब्दावली

1 **ध्वनि नियम** – विशिष्ट काल और दशाओ में हुए नियमित परिवर्तन या विकार या विकास को उस भाषा का ध्वनि नियम'' कहते हैं।

2 **सादृश्य नियम** – जहाँ ग्रिम नियम से भिन्न प्रकार का ध्वनि परिवर्तन दृष्टिगोचर होता हो तो उस अपवाद का कारण 'सादृश्य' को मानना चाहिए।

3 भावातिरेक – जीवन में अनेक अवसरों पर व्यक्ति भावुक हो उठता है। भावातिरेक के कारण ही ध्वनियों में अनेक परिवर्तन हो जाते हैं।

जैसे – बेटी से बिटिया, वधू से वधूरी /बहुरिया, बेटा से बेटवा/बिटवा, रामू से रमुआ आदि

4 **लिपि दोष** – जिस प्रकार भाषण के कारण ध्वनियों में अन्तर आता है, उसी प्रकार लिखने के कारण भो ध्वनि परिवर्तन होता है। क्योंकि दूसरी भाषा को ध्वनियों को लिखने के लिए अपनी भाषा की लगभग मिलती – जुलती ध्वनियों का प्रयोग होता है। जैसे – फारसी में 'कर्ण' को करण प्रकाश को 'परकाश' आदि लिखा जाता है।

5 **भारोपीय भाषा** – मुख्यतः भारत और यूरोप में बोली जाने वाली भाषा।

20.12 अभ्यासाथ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर 50 शब्दो में दीजिए –

1. ध्वनि नियम किसे कहते हैं।
2. ध्वनि नियम और ध्वनि प्रवृत्ति में अन्तर स्पष्ट करो।
3. निम्नलिखित विषयों पर 100 शब्दों में टिप्पणी लिखिये –
   - अ. ध्वनि नियम की परिभाषा
   - ब. ग्रासमान नियम
   - स. बर्नर नियम
   - द. तालव्य भाव नियम
4. ग्रिम नियम पर सारगभित निबन्ध लिखो
5. ध्वनियों के विकास के कारणों पर लघु निबन्ध लिखें।

प्रश्नों के उत्तर

1. इकाई 19.3 में देखें
2. इकाई 19.5 में देखें
3. अ. इकाई 19.8, 'प्रमुख ध्वनि नियम' में देखें
   - ब. इकाई 19.8, 'प्रमुख ध्वनि नियम' में देखें
   - स. इकाई 19.8, 'प्रमुख ध्वनि नियम' में देखें
   - द. इकाई 19.8, 'प्रमुख ध्वनि नियम' में देखें
4. इकाई 19.8 प्रमुख ध्वनि नियम में देखें
5. इकाई 19.10 में देखें।

20.13 सारांश

इस इकाई में आपने ध्वनि नियम व ध्वनियों के विकास का अध्ययन किया है। ध्वनि नियम के विषय में विस्तार से जानते हुए आपने ग्रिम नियम, ग्रासमैन नियम, बर्नर नियम, सादृश्य व तालव्य भाव नियम की सोदाहरण जानकारी ली। इसके साथ ही ध्वनियों के विकास को पढ़ा। ध्वनि परिवर्तन का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक होता है। यदि किसी भाषा की किसी विशिष्ट ध्वनि में किसी पद के अन्तर्गत परिवर्तन होता है तो यह परिवर्तन प्रायः उन सभो पदों में पहुंचता है जिनमें वह विशिष्ट ध्वनि होती है। यही परिवर्तन ही ध्वनियों का मुख्य कारक हैं। ध्वनियों के विकास के आभ्यन्तर एवं बाह्य कारण माने गये हैं। जो इस प्रकार हैं–

मुख सुख, भावातिरेक, आत्म प्रदर्शन, वाग्यन्त्र की विभिन्नता, भोगोलिक कारण, ऐतिहासिक कारण, काल का प्रभाव, सामाजिक प्रभाव, कलात्मक स्वच्छन्दता, लिपि दोष, सादृश्य तथा मात्रा सुर व बलाघात।

20.14 संदभ ग्रंथ सूची

1. तुलनात्मक भाषा विज्ञान– डॉ. पाण्डुरंग दामोदर गुणे, मोतीलाल बनारसीदास, 1963.
2. संस्कृत भाषाविज्ञान– राजकिशोर सिंह, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा,1986.
3. Introduction to Sanskrit Philology – बटुकृष्णघोष, मुन्शीराम मनोहरलाल,नई दिल्ली,1943.
4. भाषाविज्ञान,भोलानाथ तिवारी,किताब महल,इलाहाबाद,1951.
5. भाषाविज्ञान एवं भाषा शास्त्र, डॉ. कपिल देव द्विवेदी,विश्वविद्यालय प्रकाशन,वाराणसी,2002.